न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968

कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध जांच और कथित कदाचार के साक्ष्य के संबंध में

(राज्य सभा के सभापति द्वारा गठित)
जांच समिति का प्रतिवेदन
खण्ड - 1

10 सितम्बर, 2010

विषय-सूची

क्रम सं.	विवरण	पृष्ठ
1.	प्रस्तावना	1
2.	सम्पूर्ण मामले पर जांच समिति की समुक्तियां; समिति की सम्पूर्ण मामले की गहराई तक जाने वाली सामान्य समुक्तियां दो विषयों से संबंधित हैं : 1. यह निवेदन कि क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के आचरण की जांच के दौरान उन्हें मौन रहने का अधिकार प्राप्त था; 2. क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध लगाये गये अवचार के आधार, यदि सिद्ध हो जाते हैं; अनुच्छेद 217 (1) उपबंध (ख) के साथ पठित अनुच्छेद 124 (4) के अधीन "कदाचार" माने जायेंगे।	1-12
3.	वर्तमान जांच समिति की नियुक्ति और कार्यवाही का संक्षिप्त विवरण।	13-20
4.	तथ्य: सौमित्र सेन के आचरण की जांच और इस मामले में अभिलिखित तथ्यों का जांच समिति द्वारा मूल्यांकन।	20-42
5.	निर्णय के पश्चात् का घटना-क्रम (2007 का ए.पी.ओ.टी 462 (2007 का ए. पी. ओ. 415 भी) में कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड-पीठ के दिनांक 25 सितम्बर, 2007 का आदेश।	42
6.	शेष प्रतिविरोध और न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से किये गये निवेदन	42-47

7.	आभार - प्रदर्शन	47-48
8.	जांच समिति के निष्कर्ष	48-49
9.	टिप्पण - प्रतिवेदन के पाठ से संबंधित एग्जिबिट्स	50-54

न्यायाधीश जांच अधिनियम, 1968 की धारा 3 की उप-धारा (2) के अंतर्गत गठित जांच समिति का प्रतिवेदन

1. **प्रस्तावना**:

कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को हटाने की मांग के आधारों की जांच को पूरा करने के पश्चात्, जांच समिति - जिसे राज्य सभा की दिनांक 16.12.2009 की अधिसूचना के द्वारा (पुन:) गठित किया गया था - न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968 (1968 का अधिनियम) की धारा 4 (2) के अंतर्गत अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। 1968 के अधिनियम की धारा 4 (2) में यह कहा गया है:

> "अन्वेषण की समाप्ति पर, समिति अपनी रिपोर्ट, यथास्थिति, अध्यक्ष या सभापति को या जहां कि समिति अध्यक्ष और सभापति द्वारा मिलकर गठित की गयी है, वहां उन दोनों को देगी जिसमें पूरे मामले पर ऐसे विचार व्यक्त करते हुए जिन्हें वह ठीक समळाता है हर एक आरोप पर अलग-अलग उसके निष्कर्ष कथित होंगे।"
>
> इस प्रतिवेदन में सम्पूर्ण मामले पर समिति की समुक्तियों, जांच समिति की कार्यवाही का संक्षिप्त विवरण, जांच किए गए तथ्यों का विस्तृत मूल्यांकन और लगाये गये दो स्पष्ट आरोपों में से प्रत्येक के संबंध में समिति की समुक्तियों का उल्लेख किया गया हैं।

2. **सम्पूर्ण मामले पर जांच समिति की समुक्तियां**:

समिति की सम्पूर्ण मामले की गहराई तक जाने वाली सामान्य समुक्तियां दो विषयों से संबंधित है:

(1) **यह निवेदन कि क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के आचरण की जांच के दौरान उन्हें मौन रहने का अधिकार प्राप्त था।**

(2) **क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध लगाये गये अवचार के आधार, यदि सिद्ध हो जाते हैं, अनुच्छेद 217 (1) उपबंध (ख) के साथ पठित अनुच्छेद 124 (4) के अधीन "कदाचार" माने जायेंगे।**

संदर्भ : (1) यह निवेदन कि क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के आचरण की जांच के दौरान, उन्हें मौन रहने का अधिकार प्राप्त था।

इस जांच से आरंभ में 1968 के अधिनियम के अंतर्गत किसी न्यायाधीश के आचरण के संबंध में की जाने वाली जांच के संबंध में यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न हुआ: अर्थात् क्या किसी न्यायाधीश को, (संसद की दोनों सभाओं में से किसी एक सभा में प्रस्तुत किये गये प्रस्ताव के पश्चात्), जिसके आचरण की 1968 के अधिनियम के अंतर्गत जांच की जा रही है मौन रहने का अधिकार प्राप्त है।

न्यायमूर्ति, सौमित्र सेन को उन सुस्पष्ट आरोपों की जानकारी दे दी गई थी जिनके आधार पर अवचार के दो कृत्यों (प्रस्ताव में उल्लिखित) की जांच करने का प्रस्ताव किया गया था, अर्थात्

"1. कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर की हैसियत से प्राप्त की गई बड़ी धनराशि का दुर्विनियोजन; और

2. कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष धनराशि के दुर्विनियोग के संबंध में तथ्यों का दुर्व्यपदेशन।"

वह अधिवक्ताओं के माध्यम से हाजिर हुए और उन्होंने लगाये गये सुस्पष्ट आरोपों पर गुणावगुणों के आधार पर लिखित प्रतिरक्षा कथन दर्ज कराया; उन्होंने जांच समिति के समक्ष उपस्थित होने और तथ्यों एवं कानून के आधार पर बहस करने के लिए अधिवक्ताओं को नियुक्त किया। उनका यह प्रतिविरोध था (उनके आचरण के संबंध में वर्तमान जांच के मामले में) कि उन वस्तुओं की बिक्री से प्राप्त (33,22,800 रूपए) धनराशि, जिसके लिए उन्हें - 1983 के वाद 8 (भारतीय इस्पात प्राधिकरण लिमिटेड बनाम भारतीय पोत परिवहन निगम और अन्य) में (कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा) - 'रिसीवर' नियुक्त किया गया था, का 'लिंक्स इंडिया लिमिटेड' नामक कंपनी में "पूर्णत:" निवेश कर दिया गया था जिसका बाद में समापन हो गया और उन्होंने इस धनराशि के किसी भी भाग का दुर्विनियोजन नहीं किया है; 3 दिसम्बर, 2003 को कलकत्ता उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के पश्चात् उन्होंने अपने गबन को छुपाने का प्रयास किया : पहले तो उन्होंने उस न्यायालय से सहयोग नहीं किया जो बिक्री से प्राप्त (33,22,800 रूपए) की धनराशि, जिसका उन्हें रिसीवर नियुक्त किया गया था,

की जांच-पड़ताल कर रहा था; फिर न्यायालय द्वारा अनुरोध करने के बावजूद, उन्होंने हठपूर्वक जानकारी देने से इन्कार कर दिया; वह सुनवाई में न तो स्वयं उपस्थित हुए और न ही अपने किसी प्रतिनिधि अथवा अधिवक्ता को भेजा; और फिर जब कुछ वर्ष पश्चात् इस मामले की जांच कर रहे एकल न्यायाधीश ने (1983 के वाद 8 में वादी के अनुरोध पर) उनके विरूद्ध प्रतिकूल टिप्पणियां की और उन्हें (न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को) बिक्री से प्राप्त समूची धनराशि का ब्याज सहित और बिना किसी आपत्ति तथा विरोध के किश्तों में भुगतान करने का निर्देश दिया; न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने समूची धनराशि का भुगतान करने के पश्चात्, कलकत्ता उच्च न्यायालय में अपील की कि उनके विरूद्ध एकल न्यायाधीश द्वारा (उनके दिनांक 10 अप्रैल, 2006 के आदेश में) की गई टिप्पणियों को हटा दिया जाए और उनके इस आवेदन के समर्थन में अटर्नी के रूप में उनकी मां का मुद्दा उनकी ओर से शपथ-पत्र भी दायर किया गया था; इस शपथपत्र में उन्होंने कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष ळूठा व्यपदेशन दिया कि मदों की बिक्री से प्राप्त धनराशि (33,22,800 रूपए) का (और ब्याज अर्जित करने के लिए) लिंक्स इंडिया लिमिटेड नामक कंपनी में निवेश कर दिया गया जिसका वर्ष 1999-2000 में समापन हो गया और उन्होंने धनराशि की हानि का यह कारण बताया। इस कारण - जो वर्तमान कार्यवाही में असत्य और मिथ्या सिद्ध हुआ है - ने कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ को प्रभावित किया जिसने (अपने दिनांक 25 सितंबर, 2007 के निर्णय में) न्यायामूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध एकल न्यायाधीश द्वारा की गई टिप्पणियों को हटाने का आदेश दिया। जब कि जांच के दौरान उनसे मामले में दिए गए दस्तावेजी साक्ष्यों और लिखित प्रतिरक्षा कथन में कही गई बातों में विरोधाभास होने के बारे में पूछा गया, तो न्यायमूर्ति सौमित्र सेन (जो इस पूरी कार्यवाही के दौरान व्यक्तिगत रूप से अनुपस्थित रहे) की ओर से यह निवेदन किया गया - कि उन्हें मौन रहने का अधिकार प्राप्त है, यह कि लगाये गये स्पष्ट आरोपों को "पूर्णतया <u>सिद्ध</u>" किया जाए और "युक्तियुक्त संदेह से परे <u>सिद्ध</u> किया जाए।"

जाँच समिति के सुविचारित मत में यह निवेदन कि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को मौन रहने का अधिकार प्राप्त है (वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में) निम्नलिखित कारणों से अमान्य और भ्रामक है:

(क) 1968 के अधिनियम (और 1969 के नियम) के अंतर्गत किसी न्यायाधीश के आचरण की जाँच से संबधित कार्यवाही उस न्यायाधीश के विरूद्ध कोई दांडिक कार्यवाही नहीं है; इस जाँच के अंतर्गत जिस न्यायाधीश के आचरण की जाँच की जा रही है, वह कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसे दोषसिद्ध किया जाए, या जिस पर दंड अथवा जुर्माना लगाया जाए; ना ही 1968 के अधिनियम के अंतर्गत नियुक्त जाँच समिति को ऐसी कोई सिफारिश करने का अधिकार है। इसके अतिरिक्त, ऐसा कोई न्यायाधीश जिसके संबंध में 1968 के अधिनियम के अंतर्गत जाँच का आदेश दिया गया है, कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जिस पर "किसी अपराध का आरोप" लगाया गया हो और उसके आचरण से संबंधित जाँच के दौरान उसके द्वारा साक्ष्य देने से भारत के संविधान के अनुच्छेद 20(3) के अंतर्गत उसके किसी मूल अधिकार का हनन नहीं होता हो।) इसके विपरीत, 1969 के नियमों (नियम 4(1)) के अनुसार जाँच समिति उस न्यायाधीश को, जिसके आचरण की जाँच की जा रही है, "साक्ष्य प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करती है।"

(ख) 1969 के नियमों (1968 के अधिनियम के अंतर्गत तैयार किए गए) के प्रपत्र-1 में जारी की गई सूचना सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (किसी सिविल वाद के निपटान के लिए समन) के परिशिष्ट ख में प्रपत्र-1 में निर्धारित सूचना के समान ही है। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अंतर्गत आरोपित व्यक्ति को जारी किए जाने वाले समन की सूचना इससे भिन्न होती है। 1973 की संहिता की दूसरी अनुसूची के प्रपत्र-1 में सूचना प्राप्त करने वाले व्यक्ति को "अभियुक्त" कहा गया है, उसे संबंधित मजिस्ट्रेट के समक्ष स्वयं अथवा किसी प्रतिनिधि, यथा-स्थिति, के माध्यम से "लगाये गये आरोप" का उत्तर देना और उपस्थित होना होता है।

(ग) किसी दांडिक विचारण के विपरीत, 1968 के अधिनियम (और 1969 के नियम) के अंतर्गत उस न्यायाधीश को, जिसके आचरण की जाँच का निर्देश दिया गया है, अपना लिखित प्रतिरक्षा कथन दर्ज कराने का अवसर दिया जाता है, जोकि दांडिक विचारण के संबंध में एक ऐसी बात है जो न कभी सुनी गयी है और न ही कभी इसकी अनुमति दी गई है। जबकि किसी दांडिक विचारण में मौन रहने का अधिकार "अभियुक्त" व्यक्ति को अपनी ओर से कोई ऐसा साक्ष्य देने से बचाता है जिससे वह अपराध में फंस सकता हो, 1969 के नियमों के अंतर्गत निर्धारित

कानूनी सूचना (प्रपत्र-1 में) के मामले में संबंधित न्यायाधीश को उन सभी गवाहों और सभी दस्तावेजों, जिनके साक्ष्य के आधार पर वह अपना बचाव करना चाहता है, प्रस्तुत करना होता है।"

(घ) दंड प्रक्रिया के अंतर्गत अपराधों पर कार्यवाही के लिए जब तक कोई अभियुक्त व्यक्ति दोषी होने या दोषी न होने का अभिवचन करके पेश नहीं होता है, उस पर विचारण नहीं किया जा सकता। लेकिन 1969 के नियमों के नियम 8 के अंतर्गत - यदि कोई न्यायाधीश उसे नियम 5 में उल्लिखित सूचना के तामील होने पर (जाँच समिति के समक्ष) पेश नहीं होता है, तो जाँच समिति को यह अधिकार है कि वह न्यायाधीश की अनुपस्थिति में जाँच की कार्यवाही करे: ऐसा इसलिए किया जाता है क्योंकि न्यायाधीश जाँच अधिनियम, 1968 के अंतर्गत आने वाली किसी कार्यवाही में संबंधित न्यायाधीश को कोई ऐसा व्यक्ति नहीं माना जाता है, जिस पर कोई अपराध करने का आरोप लगा हो।

(ड.) 1968 के अधिनियम के अंतर्गत गठित किसी जाँच समिति की कार्यवाही की तुलना निर्वाचन विधियों के उपबंधों के अंतर्गत आने वाले निर्वाचन संबंधी अपराधों के साथ कदापि नहीं की जा सकती है; और निर्वाचन विधियों के अंतर्गत अधिनिर्णित मामलों में निर्धारित मानदंड न्यायाधीश जाँच अधिनियम, 1968 के अंतर्गत आने वाले मामलों पर लागू नहीं होता है: क्योंकि न्यायाधीशों को हटाने के लिए की जाने वाली कार्यवाही "विशिष्ट होती है और सिविल अथवा आपराधिक स्वरूप की नहीं होती है;[1]" क्योंकि उनका प्रयोजन न्यायिक आचरण की जाँच करना है ताकि न्यायिक आचरण के मानकों को बनाये रखा जा सके। भारत के उच्चतम न्यायालय[2] के कुछ निर्णयों में ऐसी कार्यवाहियों को "अर्ध-आपराधिक" माना गया है जो पूर्णतया आपराधिक स्वरूप की नहीं होतीं (जैसे निर्वाचन संबंधी अपराध और न्यायालय की अवमानना संबंधी अपराध) 1968 के अधिनियम के अंतर्गत किसी न्यायाधीश को हटाने की कार्यवाही का यदि यह अर्थ भी लिया जाता है, तो "अर्ध" क्रिया-विशेषण का अभिप्राय "मानो : मानो तकरीबन ऐसा हो : के सदृश" से है। विधिक शब्दावली में "अर्ध" शब्द का प्रयोग यह दर्शाने के लिए किया जाता है कि एक विषय उस दूसरे विषय से मिलता-जुलता है, जिसके साथ इसकी तुलना की गई है परन्तु यह केवल "कतिपय विशेषताओं तक सीमित है, यद्यपि दोनों में

अंतर्भूत और तथ्यात्मक अंतर होता है।"[3] "अर्ध-दांडिक" शब्द "दांडिक" के समान नहीं है : 1969 के अधिनियम (और 1969 के नियमों) के अंतर्गत किसी न्यायाधीश के आचरण की जांच में यह तथ्यात्मक अंतर होता है कि जब वह न्यायाधीश अपनी प्रतिरक्षा में लिखित कथन दाखिल करता है तो उसकी स्थिति किसी दीवानी मुकदमें में प्रतिवादी जैसी ही होती है सिवाय इसके कि उसके विरूद्ध लगाया गया आरोप संभावनाओं के आधार पर नहीं, वरन् युक्तियुक्त दृष्टि से "सिद्ध" होना चाहिए।

(च) यह कि 1968 के अधिनियम के अंतर्गत की जा रही जांच में लगाये गये विशिष्ट आरोप "पूरी तरह से <u>सिद्ध</u>" (या "युक्तियुक्त संदेह से परे साबित") किये जाने चाहिए, का यह आशय नहीं है कि संबंधित न्यायाधीश को मौन रहने का अधिकार प्राप्त है : किसी तथ्य को उस स्थिति में सिद्ध हुआ माना जाता है जब कि कोई जांच प्राधिकारी उस तथ्य के विद्यमान होने के प्रति आश्वत हो या फिर वह उसकी विद्यमानता के प्रति इतना अधिक विश्वस्त हो कि उस मामले विशेष की परिस्थितियों में कोई सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति उसकी विद्यमानता के प्रति अपने मन में कोई धारणा बना ले। किसी तथ्य को कब और कैसे <u>सिद्ध हुआ</u> माना जा सकता है, यह बात उस मामले विशेष की परिस्थितियों और 'सकारात्मक' तथा 'नकारात्मक' दोनों ही प्रकार के साक्ष्यों की समग्रता पर निर्भर करती है।

वर्तमान जांच के दौरान, दस्तावेजी साक्ष्यों (सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही) से निम्नलिखित बातों का स्पष्ट रूप से पता चलता है :

(i) यह कि 'रिसीवर' के दो खाते (ए एन जेड ग्रिन्डलेज बैंक, चर्च लेन शाखा, कोलकाता और इलाहाबाद बैंक स्टीफन हाउस शाखा, कोलकाता) जो सौमित्र सेन के नाम पर थे, केवल उन्हीं के द्वारा खोले और संचालित किए गए थे; इन्हीं दो खातों में माल के विक्रय से प्राप्त हुई धन राशि (अर्थात् 33,22,800 रूपए की कुल धन-राशि) जिसके सौमित्र सेन रिसीवर नियुक्त किए गए थे, जमा करायी गई थी;

(ii) यह कि इन दोनों बैंक खातों में से किसी भी खाते से लिंक्स इंडिया लिमिटेड में निवेश करने के लिए कोई धनराशि निकाली हुई नहीं दर्शायी गई है; इसके विपरीत, सौमित्र सेन द्वारा ए एन जेड ग्रिन्डलेज बैंक चर्च लेन शाखा में खोले गए

एक तीसरे बैंक खाते (वह भी उनके नाम से) से 27.2.1997 को पृथक् धनराशि (अर्थात् 70 लाख रूपए) में से 25 लाख रुपये की धनराशि जो सौमित्र सेन को एक पूर्णत: भिन्न कंपनी [अर्थात् कलकत्ता फैन्स (1995) प्रा. लि.)] के समापन के संबंध में एक पूर्णत: भिन्न मामले में सौंपी गई थी, में लिंक्स इंडिया लि. को अंतरित की गई दर्शायी गई है; 70 लाख रूपए की उक्त राशि कलकत्ता उच्च न्यायालय के आदेशों द्वारा कलकत्ता फैन्स (1995) प्रा. लिमिटेड के समापन पर इसके कर्मकारों को देय राशि का भुगतान करने के लिए सौमित्र सेन को सौंपी गई थी। यह भी सिद्ध किया गया है कि सौमित्र सेन द्वारा आहरित 25 लाख रूपए की राशि का चेक संख्या 624079 इस तीसरे खाते से जारी किया गया था और इसे मै. लिंक्स इंडिया लि. को दिया गया था और यह रिसीवर के दो खातों में से किसी भी खाते से नहीं दिया गया था।

(iii) सौमित्र सेन द्वारा ए एन जेड ग्रिन्डलेज बैंक के प्रबंधक को लिखे गए पत्रों (दिनांक 22.5.1997 के हस्तलिखित पत्र) के अनुवर्तन में, 22.5.1997 को (ए एन जेड ग्रिन्डलेज बैंक रिसीवर के खाते में से) "लगभग 22 लाख रूपए" की राशि को उसी बैंक में सौमित्र सेन के तीसरे खाते में अंतरित करने का अनुरोध किया गया था, जो कि सौमित्र सेन को रिसीवर के रूप में नियुक्त करने वाले कलकत्ता उच्च न्यायालय के आदेशों का स्पष्ट रूप से उल्लंघन था : दोनों बैंक खातों में जमा विक्रय से प्राप्त धन-राशि (33,22,800 रूपए) को खाते में रखा जाना था और कलकत्ता उच्च न्यायालय की अनुमति के बिना इसका विलगन या व्ययन नहीं किया जा सकता था। सौमित्र सेन द्वारा बैंक को किए गए लिखित अनुरोध के अनुवर्तन में "लगभग 22 लाख रूपए" की राशि अंतरित किए जाने के बाद उनके तीसरे खाते में इस तरह अंतरित राशि का सौमित्र सेन द्वारा आहरित चैकों, जिनमें उन व्यक्तियों के पक्ष में आहरित धारक चैक भी शामिल थे जिनकी वर्तमान मामले में कलकत्ता फैन्स (1995) प्रा. लि. के "कर्मकारों" के रूप में कभी भी पहचान नहीं की गई है, द्वारा बड़ी राशि का संवितरण करने के लिए उपयोग किया गया था।

(iv) यह कि इलाहाबाद बैंक, स्टीफन हाउस शाखा में रिसीवर के खाते से (रिसीवर के ए एन जेड ग्रिन्डलेज बैंक में खाते से भी) बड़ी संख्या में धारक/स्वयं के नाम पर

आहरित चैकों सहित चैकों, जो कि सभी सौमित्र सेन द्वारा जारी और हस्ताक्षरित किए गए हैं, द्वारा बड़ी राशि के संवितरण दर्शाये गए हैं : ये संवितरण किए जाने के प्रयोजन को स्पष्ट नहीं किया गया है।

(v) यह कि सौमित्र सेन द्वारा रिसीवर के दोनों खातों में से किसी भी खाते से पैसा निकालने के लिए न्यायालय जिसने उन्हें रिसीवर नियुक्त किया था, की कोई अनुमति मांगी या ली नहीं गई थी, न ही सौमित्र सेन द्वारा रिसीवर के रूप में कलकत्ता उच्च न्यायालय में कोई खाता विवरण दाखिल किया गया (कलकत्ता उच्च न्यायालय के मूल शाखा नियमों (अध्याय 21) के अंतर्गत अर्ध-वार्षिक विवरण दाखिल करना अपेक्षित होने और दिनांक 30.4.1984 के आदेश द्वारा उन्हें विवरण दाखिल करने के लिए विशेष रूप से निर्देश दिए जाने के बावजूद) सौमित्र सेन को न्यायाधीश नियुक्त किए जाने से पहले या उसके बाद किसी भी समय कोई विवरण दाखिल नहीं किया गया।

(vi) रिसीवर के इलाहाबाद बैंक के खाते में 29.3.1994 को खाता शेष 3215 रूपए था और 2008/2009 के अंत में खाता शेष "शून्य" था। रिसीवर का ए एन जेड ग्रिन्डलेज बैंक का खाता शून्य खाता शेष के साथ 22.3.2000 को बंद किया गया था।

स्वाभाविक रूप से इस चिंताजनक स्थिति के लिए एक स्पष्टीकरण अपेक्षित था: रिकार्ड पर एकमात्र स्पष्टीकरण न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा हस्ताक्षरित (लेकिन शपथ पत्र दिए बिना) प्रतिरक्षा का लिखित कथन है जिसमें उन्होंने इस बात की पुष्टि की है कि उन्होंने 33,22,800 रूपए की पूरी धनराशि "लिंक्स इंडिया लिमिटेड" नामक एक कंपनी में निवेश कर दी है जिसका 1999-2000 में परिसमापन हो गया : एक ऐसा दावा, जिसे रिकार्ड पर लाए गए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों द्वारा पुष्ट नहीं किया गया। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन इस जांच समिति की कार्यवाही के दौरान कभी भी व्यक्तिगत रूप से उपस्थित नहीं हुए और उनके काउंसिल ने यह दोहराया कि उन्हें "मौन रहने का अधिकार प्राप्त है" : उनके लिए पेश हुए कांउसिल रिसीवर के दो खातों में धन के नि:शेषण के लिए कोई स्पष्टीकरण (उनकी ओर से) नहीं दे पाये। जांच समिति की राय में, न तो

कानून में और न ही इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के पास मौन बने रहने का अधिकार है, जैसाकि उनकी ओर से दावा किया गया था। 33,22,800 रू0 की धन-राशि (या उसके किसी हिस्से) के बारे में किसी भी प्रकार का स्पष्टीकरण न दिए जाने का अपरिहार्य निष्कर्ष यह निकलता है कि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के पास देने के लिए कोई विश्वसनीय स्पष्टीकरण नहीं है।

निष्कर्ष:

"कदाचार" के समान अवचार का अभियुक्त कोई न्यायाधीश जांच समिति के समक्ष बिल्कुल ही उपस्थित न होने का विकल्प चुन सकता है; उस स्थिति में, जांच समिति (1969 के नियमों के नियम 8 के अंतर्गत) उस न्यायाधीश की अनुपस्थिति में जांच जारी रख सकती है। लेकिन एक बार यदि वह न्यायाधीश जांच कार्यवाही में भाग लेने के लिए समय की मांग करके, स्थगन की मांग करके, प्रतिरक्षा संबंधी लिखित कथन दाखिल करके और अपनी ओर से पेश होने और मामले की पैरवी करने के लिए अधिवक्ताओं की सेवाएं लेकर जांच कार्यवाही में भाग लेने का इरादा व्यक्त करता है (जैसाकि वर्तमान मामले में हुआ है), तो उस न्यायाधीश (विशेष रूप से इसलिए क्योंकि वह एक न्यायाधीश के पद पर है) का जांच में सहयोग देने और पूछताछ के लिए (जरूरी नहीं कि यह शपथ के जरिए ही हो) उपस्थित रहने का दायित्व बनता है चाहे यह पूछताछ समिति की सहायता करने के लिए नियुक्त अधिवक्ताओं द्वारा की जाए अथवा स्वयं जांच समिति द्वारा। उस न्यायाधीश को लगाये गये सुस्पष्ट आरोपों का दोषी ठहराना किसी भी तरीके से जांच समिति के कर्त्तव्य को कम नहीं करता है यदि ऐसा आरोप अभिलिखित किये गए मौखिक और/अथवा दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा युक्तियुक्त सन्देह से परे सिद्ध कर दिया जाता है।

संदर्भ: (2) क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध अवचार के आधार, सिद्ध होने पर अनुच्छेद 217(1) उपबंध (ख) के साथ पठित अनुच्छेद 124(4) के अधीन "कदाचार" माने जायेंगे।

जांच समिति की राय में, इस प्रस्ताव में विनिर्दिष्ट अवचार के आधार सिद्ध हो जाने पर ये अनुच्छेद 217(1) के उपबंध (ख) के साथ पठित अनुच्छेद 124(4) के अधीन "कदाचार" माने जाएंगे।

भारत में उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के संदर्भ में "कदाचार" शब्द पहली बार भारत सरकार अधिनियम, 1935 की धारा 200(2) के उपबंध (ख) में अन्त: स्थापित किया गया था। 1935 के अधिनियम के अंतर्गत, आरंभ में यह प्रिवी काउन्सिल और बाद में भारत का संघीय न्यायालय था जिसे जब किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के विरूद्ध "कदाचार" के आरोप लगाए जाते थे, तो भारत के गवर्नर-जनरल को प्रतिवेदन देना होता था। इलाहाबाद में न्यायाधिकार के उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश न्यायमूर्ति एस.पी. सिन्हा, के विरूद्ध आरोपों के संबंध में संघीय न्यायालय के प्रतिवेदन में गवर्नर-जनरल द्वारा उस न्यायाधीश के विरूद्ध लगाया गया एक आरोप यह था "कि न्यायमूर्ति एस.पी. सिन्हा न्यायालय से बाहर ऐसे आचरण के दोषी पाये गए हैं जो कि इतने बड़े पदधारी के लिए अमर्यादित और अशोभनीय आचरण है जिसे उस समय विशेषीकृत कर दिया गया था। चूँकि उस न्यायाधीश के विरुद्ध यह आरोप साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं हो पाया था, अत: ऐसा माना गया कि यह सिद्ध नहीं हुआ है।[4] लेकिन आरोप ने, जिस तरह से वह लगाया है, संक्षेप में लेकिन उपयुक्त ही, "कदाचार" शब्द के क्षेत्र और परिधि का वर्णन किया था अर्थात् ऐसे आचरण का दोषी जो, भले ही न्यायालय के अन्दर हो या बाहर, "इस तरह के उच्च पद-धारक के लिए अनुपयुक्त और अशोभनीय है।" यही "कदाचार" शब्द 1950 के भारतीय संविधान के अनुच्छेद 217(1) के उपबंध (ख) के साथ अनुच्छेद 124(4) को पढ़ने पर आता है - इन उपबन्धों में कहा गया है कि उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश को उसके पद से "सिद्ध कदाचार" के कारणों के बिना नहीं हटाया जाएगा। उपसर्ग "सिद्ध" का आशय, यदि जांच समिति द्वारा ऐसी सिफारिश की गई हो तो, केवल यह है कि संसद् के सम्बद्ध सदन के आवश्यक बहुमत की संतुष्टि के स्तर तक साबित होना। "सिद्ध कदाचार" शब्द, अनुच्छेद 124(4) में परिभाषित नहीं किए गए हैं। ऐसा संभवत: इसीलिए है: क्योंकि "सिद्ध कदाचार" वाक्यांश का आशय ऐसे आचरण से है, जो, सिद्ध होने पर, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के लिए शोभनीय नहीं है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हमारे संविधान में इसलिए उच्च स्थान दिया गया है क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश (उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की तरह) के कार्य और नियंत्रणकारी शक्तियां इस देश के नागरिकों और निवासियों के जीवन और मृत्यु को इतना अधिक प्रभावित करते हैं जितना कोई अन्य सार्वजनिक निकाय या प्राधिकरण प्रभावित नहीं

करता है। यह न्यायाधीश की ऐसी शक्ति है जिसमें कर्तव्य भी शामिल है, चाहे वह न्यायालय के अन्दर हो या न्यायालय के बाहर। निर्णय-विधि का उल्लेख अनावश्यक है क्योंकि "कदाचार" की श्रेणियों की कोई सीमा नहीं है।

अनुच्छेद 124(4) और (5) तथा न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968 के उपबन्धों की व्याख्या करते हुए और कभी भी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को उसके पद से हटाने के किसी प्रश्न पर विचार करते हुए, यह नहीं भूलना चाहिए कि भारत के लोगों को निर्भीक और स्वतंत्र न्यायपालिका प्रदान करने के लिए उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को समय पूर्व पद से न हटाये जाने की पूर्ण सुरक्षा सहित संविधान में विशेष स्थान दिया गया है और उन्हें केवल संसद द्वारा अधिनियमित (न्यायाधीश जांच अधिनियम, 1968) के साथ पठित अनुच्छेद 124(4) और (5) में उल्लिखित जटिल प्रक्रिया द्वारा ही हटाया जा सकता है।

उच्च न्यायपालिका में सन्निहित विस्तृत शक्तियों और उच्च न्यायालय (और उच्चतम न्यायालय) के न्यायाधीशों को दी गई असाधारण उन्मुक्तियों की दृष्टि से यह आवश्यक है कि न्यायाधीश निर्भीक और स्वतंत्र होने चाहिए और यह कि उन्हें ईमानदारी के उच्च आदर्श का पालन करना चाहिए ताकि वे उन लोगों में विश्वास उत्पन्न कर सकें जो उनसे न्याय की अपेक्षा रखते हैं। जहाँ एक ओर न्यायाधीशों को निहित स्वार्थ और दुर्भावना से प्रेरित आक्रमण से बचाना आवश्यक है, वहीं दूसरी ओर यह भी आवश्यक है कि ऐसे न्यायाधीशों को जिनके आचरण से न्यायालय की छवि धूमिल होती है, न्यायपालिका की छवि को धूमिल न करने दिया जाये। 'कदाचार' शब्द 'सदाचार' का विपरीतार्थी है: यह उन शर्तों का उल्लंघन है जिस पर निर्धारित न्यायिक कार्यकाल की गारंटी आधारित होती है। उच्चतर न्यायपालिका अनिवार्य रूप से न्यास है, और यह लोगों का अधिकार है कि (संसद में अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से) वह इस न्यास को भंग कर दे - लेकिन सिर्फ उसी स्थिति में जबकि "कदाचार" सिद्ध हो जाये।

जिस समय न्यायमूर्ति सौमित्र सेन एक अधिवक्ता थे, उस समय एक रिसीवर के रूप में उनका आचरण तथा अनेकानेक कार्य एवं त्रुटियां और एक न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के बाद उनका आचरण: जैसे रिसीवर के दो खातों में से पूर्णत: अना-

धिकृत रूप से उनके द्वारा धनराशि निकाले जाने के तथ्य को छुपाने के लिए ळूठे स्पष्टीकरण देना, न्यायालय में (अपने अटर्नी के रूप में अपनी मां के माध्यम से) ऐसा शपथपत्र प्रस्तुत करना जिसके मिथ्या होने की इनको जानकारी थी और जिसे उन्होंने (न्यायमूर्ति सेन ने) कभी सत्य नहीं माना - ऐसे मामले हैं, जो उच्चतर न्यायपालिका की प्रतिष्ठा और सम्मान को ठेस पहुँचाते हैं; ये मामले ऐसे हैं जो लोगों के मन में उच्चतर न्यायपालिका के प्रति श्रद्धा और विश्वास को धक्का पहुँचाते हैं। मौद्रिक क्षतिपूर्ति अथवा निकाले गए धन की वापसी से कोई कृत्य अथवा त्रुटि "कदाचार" न होती हो, ऐसा नहीं है, विशेषत: जब धन की ऐसी वापसी तब की गई हो (जैसा कि वर्तमान मामले में हुआ है), जब उस न्यायाधीश को न्यायालय ने उसके द्वारा विक्रय से प्राप्त संपूर्ण धनराशि का ब्याज सहित पुनर्भुगतान करने का निर्देश दिया हो जिस न्यायालय ने उन्हें रिसीवर नियुक्त किया था।

III. <u>वर्तमान जांच समिति का गठन और कार्यवाही का संक्षिप्त विवरण</u>:

(1) 20 फरवरी, 2009 को राज्य सभा के 58 सदस्यों ने न्यायमूर्ति सौमित्र सेन (कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश) को निम्नलिखित दो आधारों पर उनके पद से हटाने के लिए भारतीय संविधान 1950 के अनुच्छेद 217(1)(ग) के साथ पठित अनुच्छेद 124(4) के अन्तर्गत माननीय सभापति को निम्न प्रस्ताव की सूचना दी :

(1) कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर की हैसियत से प्राप्त की गई बड़ी धनराशि का दुर्विनियोजन; और

(2) कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष धनराशि के दुर्विनियोजन के संबंध में तथ्यों का दुर्व्यपदेशन।

(2) उक्त प्रस्ताव के 1968 के अधिनियम की धारा 3(2) के अन्तर्गत गृहीत होने के बाद - "उन आधारों की जांच करने के लिए जिनके आधार पर कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को हटाने के लिए प्रार्थना की गई है" राज्य सभा के सभापति ने एक समिति गठित की। तत्समय गठित समिति में निम्नलिखित सदस्य थे:- भारत के उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायमूर्ति, डी.के. जैन, पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, माननीय न्यायमूर्ति टी.एस. ठाकुर, उच्चतम

न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री फॉली एस. नरीमन (राज्य सभा की 20.03.2009 की अधिसूचना के अनुसार) 1968 के अधिनियम की धारा 3(2) के अन्तर्गत गठित समिति को न्यायाधीश जाँच नियम, 1969 ("1969 के नियम") में "जाँच समिति" के रूप में वर्णित किया गया है।

(3) 25 जून, 2009 को दिनांक 20 मार्च, 2009 की अधिसूचना में आंशिक संशोधन करते हुए, राज्य सभा के सभापति ने 1968 के अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (2) के अन्तर्गत (I) माननीय न्यायमूर्ति, बी. सुदर्शन रेड्डी, भारत का उच्चतम न्यायालय, (II) पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, न्यायमूर्ति टी.एस. ठाकुर, और (III) उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री फॉली एस. नरीमन की नियुक्ति द्वारा जांच समिति का पुनर्गठन किया (राज्य सभा की दिनांक 25 जून, 2009 की अधिसूचना)। 1968 के अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (2) के खण्ड (क) के अन्तर्गत चुने गये सदस्य होने के नाते न्यायमूर्ति बी. सदुर्शन रेड्डी "जांच समिति के पीठासीन अधिकारी" थे और आगे भी बने रहे (1969 के नियमों का नियम 3)।

(4) दिनांक 11 अगस्त, 2009 की अधिसूचना के द्वारा राज्य सभा के माननीय सभापति ने अग्रिम निर्णय हेतु प्राधिकारण (आयकर) के सेवानिवृत्त सदस्य (विधि) श्री अजय सिन्हा को 1968 को अधिनियम की धारा 3 के अन्तर्गत गठित जाँच समिति का सचिव नियुक्त किया। भारत सरकार ने (1968 के अधिनियम की धारा 3(9) में यथा उल्लिखित "न्यायाधीश के विरूद्ध मामले की जांच में) समिति की सहायता" के लिए दिनांक 26 अक्तूबर, 2009 की अधिसूचना के द्वारा वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री सिद्धार्थ लूथरा और कनिष्ठ अधिवक्ता श्री सिद्धार्थ अग्रवाल को नियुक्त किया।

(5) जांच समिति के सदस्यों में से एक सदस्य (न्यायमूर्ति टी.एस. ठाकुर) को 17.11.2009 को भारत के उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया था और समिति का एक बार फिर से पुनर्गठन करना पड़ा, राज्य सभा की दिनांक 16.12.2009 की अधिसूचना के द्वारा "माननीय न्यायमूर्ति टी.एस. ठाकुर" के स्थान पर "पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश" माननीय न्यायमूर्ति, मुकुल मुद्गल का नाम प्रतिस्थापित किया गया।

(6) अन्तिम रूप से पुनर्गठित जांच समिति ने अपने विचारार्थ विषयों पर विचार करके आधारों का प्रारूप विवरण और प्रारूप आरोप-पत्र तैयार किए। 5 फरवरी, 2010 को उन्हें न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को प्रेषित किया गया ताकि उन्हें लगाये गए स्पष्ट आरोपों के संबंध में आपत्ति दर्ज कराने (यदि वे ऐसा करना चाहें) का अवसर दिया जा सके । लेकिन, न्यायमूर्ति ने अपने अधिवक्ता के दिनांक 23 फरवरी, 2010 के पत्र के माध्यम से यह तर्क दिया कि 1968 के अधिनियम के अन्तर्गत स्पष्ट आरोप लगाने से पहले और उन्हें लिखित प्रतिरक्षा कथन देने का समुचित अवसर देने से पहले किसी जांच की कोई आवश्यकता नहीं थी।

(7) अत: जांच समिति के पीठासीन अधिकारी ने निम्नलिखित सूचना (दिनांक 4 मार्च, 2010) - 1969 के नियमों के विधिक प्रपत्र-I में निर्धारित एक सूचना जारी की उसे शब्दश: पूर्ण विवरण नीचे दिया गया है।

दिनांक 4 मार्च, 2010

सेवा में,
सौमित्र सेन
न्यायाधीश, कोलकाता स्थित कलकत्ता उच्च न्यायालय,
कलकत्ता उच्च न्यायालय
कोलकाता।

जबकि राज्य सभा के सभापति ने कोलकाता स्थित कलकत्ता उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के रूप में आपको पद से हटाने का अनुरोध करते हुए राष्ट्रपति को प्रस्तुत किए जाने वाले एक प्रस्ताव को गृहीत कर लिया है;

और जबकि सभापति ने उन आधारों, जिन पर आपको हटाने का अनुरोध किया गया है, की जांच के प्रयोजनार्थ गठित जाँच समिति का मुळो, भारत के उच्चतम न्यायालय के एक न्यायाधीश को, पीठासीन अधिकारी नियुक्त किया है;

और जबकि जांच समिति ने आप के विरूद्ध उन आरोपों का विवरण तैयार किया है जिनके आधार पर जाँच किए जाने का प्रस्ताव है;

आपसे, एतद् द्वारा, यह अनुरोध किया जाता है कि आरोपों का उत्तर देने के लिए 25 मार्च, 2010 को मध्याह्न पश्चात 4.30 बजे उपर्युक्त समिति के समक्ष व्यक्तिगत रूप से अथवा ऐसे व्यक्ति के माध्यम से उपस्थित हों जिसे जांच से संबंधित सभी प्रश्नों के उत्तर देने के यथोचित निर्देश दिए गए हों;

चूंकि आपकी उपस्थिति के लिए निर्धारित दिन को आपके विरूद्ध लगाए गए आरोपों का अन्तिम निपटान करने के लिए निर्धारित किया गया है, अत: आपसे यह अनुरोध है

कि आप उस दिन उन सभी गवाहों और सभी दस्तावेजों को प्रस्तुत करें जिनके साक्ष्य के आधार पर आप अपनी प्रतिरक्षा करना चाहते हैं।

कृपया यह ध्यान रखें कि उक्त तिथि को उपस्थित होने में विफल रहने पर उन आधारों की जांच, जिन पर आपको हटाने का अनुरोध किया गया है, आपकी अनुस्थिति में की जाएगी।

आज दिनांक 4 मार्च, 2010 को मेरे हस्ताक्षर से दिया गया।

(_____ह/- _____)

(हस्ताक्षर)
पीठासीन अधिकारी
जाँच समिति

अनुलग्नक:-

1. अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (2) के अंतर्गत लगाए गए आरोपों की प्रति।
2. आधारों का विवरण जिन पर प्रत्येक आरोप आधारित है।"

ब्यौरे सहित आरोप तथा उनकी पुष्टि में दिए गए आधारों का विवरण दिनांक 4.3.2010 के नोटिस के साथ-साथ न्यायमूर्ति सौमित्र सेन तक पहुँचाया गया। आरोपों की पुष्टि में प्रस्तुत दस्तावेज़ और आधारों को भी न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को अग्रेषित किया गया। आरोप I ("दुर्विनियोजन") में, उस आरोप के ब्योरे को (पैरा 1 से 12 तक में) रेखांकित करने के पश्चात् पैरा 13 में अंतिम रूप से निम्न प्रकार से उल्लिखित किया गया है:-

> "13. आपने संपत्ति का दुर्विनियोजन किया है और भारतीय संविधान के अनुच्छेद 217 के साथ पठित अनुच्छेद 124 (4) के अंतर्गत यह "कदाचार" की श्रेणी में आता है।"

आरोप II ("मिथ्या वक्तव्य देना") उस आरोप के ब्योरे (पैरा 14 से 24 तक में) को रेखांकित करने के पश्चात् पैरा 25 में निम्न प्रकार से उल्लिखित किया गया है:-

"आपने, न्यायालय के न्यायाधीश के पद पर रहते हुए एक न्यायिक कार्यवाही के दौरान जानबूझाकर मिथ्या साक्ष्य दिए, जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 217 के साथ पठित अनुच्छेद 124 (4) के अंतर्गत "कदाचार" की श्रेणी में आता है।"

(8) तत्पश्चात् न्यायाधीश द्वारा एक अनुरोध किया गया कि उनकी उपस्थिति के लिए भेजी गई सूचना में उल्लिखित तिथि को आगे बढ़ाया जाए और दस्तावेजों की जाँच के पश्चात् अपने बचाव के लिखित कथन को प्रस्तुत करने के लिए उन्हें चार सप्ताह का समय और दिया जाए। इसकी अनुमति दे दी गई थी परंतु न्यायाधीश को (19 मार्च, 2010 के पत्र द्वारा) सूचित किया गया था कि वह 17.4.2010 को पूर्वाह्न 11.30 बजे समिति के समक्ष प्रस्तुत हों और उस तिथि तक अपनी प्रतिरक्षा का लिखित कथन दाखिल करें।

(9) न्यायमूर्ति सौमित्र सेन 17.4.2010 को स्वयं समिति के समक्ष उपस्थित नहीं हुए, परंतु दिनांक 26.03.2010 के एक पत्र में उन्होंने (प्रतिरक्षा) लिखित कथन दाखिल करने के लिए समय सीमा को एक बार पुन: "कम से कम 8 सप्ताह के लिए" और बढ़ाने के लिए निवेदन किया। दिनांक 26 अप्रैल, 2010 के एक पत्र के द्वारा न्यायाधीश को सूचित किया गया कि यदि बढ़ाई गई तारीख 3 मई, 2010 तक उनका प्रतिरक्षा का लिखित कथन दाखिल नहीं हुआ तो जाँच समिति इस मामले में "इस आधार पर आगे बढ़ेगी कि आपके विरूद्ध लगाए गए विशिष्ट आरोपों के संबंध में आपको कुछ नहीं कहना है।"

(10) इस बीच, दिनांक 4.3.2010 को न्यायाधीश को नोटिस दिए जाने के उपरांत, निश्चित आरोपों (और पुष्टि करने वाले आधारों), के साथ इलाहाबाद बैंक स्टीफन हाउस शाखा कलकत्ता से और स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक चर्च लेन, कोलकता (पूर्ववर्ती ए एन जेड ग्रिंडलेज बैंक चर्च लेन, कोलकता) से कुछ अतिरिक्त दस्तावेज़ प्राप्त हुए। दस्तावेजों के पहले सेट की प्रतियाँ [जिनके संबंध में 1968 के अधिनियम की धारा 3(9) के अंतर्गत समिति की सहायता के लिए नियुक्त अधिवक्तागण आश्वस्त थे] पहले ही न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को अग्रेषित की जा चुकी थीं। समिति के पास उपलब्ध सभी दस्तावेजों का उनके द्वारा निरीक्षण कर लिया गया था और कोलकता से प्राप्त अतिरिक्त दस्तावेजों की प्रतियाँ भी न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को अग्रेषित कर दी गई थीं: न्यायाधीश को ये दस्तावेज़ और अन्य सभी दस्तावेज़ अर्थात् जाँच समिति के पास उपलब्ध सभी

अभिलेख दिखा दिए गए थे। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के अधिवक्ता श्री सुभाष भट्टाचार्य ने जांच समिति के सचिव को लिखे गए दिनांक 20 अप्रैल, 2010 के पत्र के द्वारा आधिकारिक रूप से बताया कि दस्तावेजों का निरीक्षण पूरा हो चुका है, और यह कि "आपके कार्यालय द्वारा भरपूर सहयोग प्रदान किया गया है।"

(11) अंतत: 3 मई, 2010 को जांच समिति को "आरोपों का उत्तर" के शीर्षक से एक दस्तावेज प्राप्त हुआ - यह एक हस्ताक्षरित पत्र के रूप में था जो कि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा जांच समिति के पीठासीन अधिकारी को संबोधित किया गया था। इसे 1968 के अधिनियम की धारा 3(4) के अंतर्गत आधिकारिक रूप से उनकी प्रतिरक्षा के लिखित कथन के रूप में शामिल किया गया था और इसके बारे में न्यायाधीश को दिनांक 13.05.2010 के पत्र द्वारा सूचित कर दिया गया था। चूँकि अपनी प्रतिरक्षा के लिखित कथन में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने इस बात से इनकार किया था कि वह धारा 3(3) के अंतर्गत लगाए गए आरोपों में विनिर्दिष्ट कदाचार के दोषी हैं, इसलिए जाँच समिति ने 1969 के नियमों के नियम 7(2) के अनुरूप जांच की प्रक्रिया प्रारंभ कर दी।

(12) प्रारंभ में साक्ष्यों को अभिलिखित करने का स्थान कोलकता निश्चित किया गया था, जहाँ सभी साक्षीगण रहते थे। साक्षियों को विभिन्न बैंकों से संबद्ध सभी संगत दस्तावेज (खाता विवरण, बैंक ड्राफ्ट इत्यादि सहित), और कलकत्ता उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री में और अन्य प्राधिकरणों के पास मौजूद दस्तावेज प्रस्तुत करने के लिए बुलाया गया था। किंतु न्यायाधीश की ओर से (उनके अधिवक्ता के द्वारा 19.05.2010 को) किए गए विशिष्ट लिखित अनुरोध पर साक्षियों की जांच और मांगे गए सभी संगत दस्तावेजों और साक्ष्यों के प्रस्तुतीकरण के लिए स्थान को बदलकर नई दिल्ली कर दिया गया।

(13) दिनांक 1.6.2010 के एक पत्र के द्वारा न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को साक्षियों के द्वारा प्रस्तुत/सिद्ध किए जाने वाले सभी संगत दस्तावेजों की सूची की एक प्रति के साथ-साथ (जाँच समिति की सहायता कर रहे अधिवक्ताओं द्वारा बुलाए जाने वाले) साक्षियों की सूची प्रदान की गई; न्यायाधीश को सूचित किया गया कि 24 जून, 25 जून और 26 जून, 2010 को सुनवाई का स्थान नई दिल्ली स्थित विज्ञान भवन एनेक्सी होगा। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के अधिवक्ता ने तत्पश्चात् (दिनांक 4 जून, 2010 के पत्र द्वारा)

सुनवाई को "कम से कम 5 जुलाई, 2010" तक एक बार फिर स्थगित करने का अनुरोध किया। परंतु यह अनुरोध अस्वीकार कर दिया गया, और न्यायाधीश को सूचित किया गया कि जांच समिति पूर्व में सूचित की गई तारीखों (अर्थात्, 24, 25, और 26 जून) को ही सुनवाई करेगी। न्यायाधीश को (दिनांक 18.6.2010 के पत्र द्वारा) यह भी सूचित किया गया कि यदि वह उन्हें दिए गए अतिरिक्त दस्तावेजों के संबंध में और आगे लिखित बयान दाखिल करना चाहते हैं तो दिनांक 24.06.2010 के पहले वह ऐसा कर सकते हैं। तथापि, न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा या उनकी ओर से आगे कोई और या अतिरिक्त लिखित कथन दाखिल नहीं किया गया।

(14) नई दिल्ली में साक्ष्यों की सुनवाई के लिए निर्धारित पहले दिन (अर्थात् 24 जून, 2010) को काउन्सिल की उपस्थितियां दर्ज की गईं : नामत: (i) श्री सिद्धार्थ लूथरा, वरिष्ठ अधिवक्ता, कनिष्ठ अधिवक्ता सिद्धार्थ अग्रवाल के साथ जांच समिति की सहायता के लिए नियुक्त अधिवक्ताओं के रूप में उपस्थित हुए (दिनांक 26 अक्तूबर, 2009 की अधिसूचना के अनुसार) और (ii) अधिवक्ता चिन्मय खालेदकर के साथ श्री शेखर नफाडे, वरिष्ठ अधिवक्ता (अधिवक्ता: सुश्री नेहा एस. वर्मा, श्री मनोज, श्री शुभाशीष चक्रवर्ती, श्री सुभाष भट्टाचार्य, श्री सौमिक घोषाल और सुश्री अपर्णा सिन्हा के साथ) न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के अधिवक्ता के रूप में उपस्थित हुए। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन 24 जून, 2010 को सुनवाई में स्वयं उपस्थित नहीं हुए। दिनांक 24 जून, 2010 को सुनवाई में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को पूर्व में ही दी जा चुकी सूची में उल्लिखित पाँच साक्षियों (कोलकता में विभिन्न निकायों और प्राधिकरणों से पहले मंगाए गए दस्तावेजों को प्रस्तुत/सिद्ध करने के लिए) से समिति की सहायता के लिए नियुक्त वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा पूछताछ की गई। जांच समिति द्वारा पूछताछ किए गए प्रत्येक साक्षी के साक्ष्य को पीठासीन अधिकारी के व्यक्तिगत निर्देशों और अधीक्षण के अधीन लिखित रूप में दर्ज किया गया। इस प्रकार से प्रत्येक साक्षी से पूछताछ किए जाने और शपथ पर उनके साक्ष्यों के अभिलेखों और संगत दस्तावेजों को प्रदर्शित किए जाने के बाद न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के वरिष्ठ अधिवक्ता ने उनमें से प्रत्येक से प्रति-परीक्षा में कुछ प्रश्न पूछे परंतु उनमें से किसी के भी द्वारा प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों की प्रामाणिकता या विषय-वस्तु पर कोई प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया। 24 जून, 2010 की दोपहर की सुनवाई में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से उपस्थित हुए

वरिष्ठ अधिवक्ता श्री शेखर नफाडे ने कहा (और यह कार्यवृत्त में इस प्रकार अभिलिखित है) कि:

> "प्रतिवादी अर्थात् न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से न ही किसी साक्ष्य का अभिवर्तन किया जाना था और न ही कोई दस्तावेज प्रस्तुत किया जाना था"।

जाँच समिति द्वारा पूछे गए एक विशिष्ट प्रश्न पर न्यायमूर्ति सौमित्र सेन (प्रतिवादी) के वरिष्ठ अधिवक्ता ने यह भी कहा कि वह प्रतिवादी (न्यायमूर्ति सौमित्र सेन) से पूछताछ नहीं करना चाहते और उनका बयान अधिलिखित नहीं कराना चाहते हैं। तत्पश्चात् यह निदेश दिया गया कि मामले की अगली कार्यवाहियों (अर्थात् मौखिक बहस) की तारीख और समय सभी संबद्ध पक्षों को उचित समय पर विधिवत रूप से सूचित कर दी जाएंगी। अत: (साक्ष्य प्राप्त करने के लिए) 25 और 26 जून, 2010 के लिए निर्धारित आगामी सुनवाइयों की कोई आवश्यकता नहीं रह गई थी। तत्पश्चात् न्यायाधीश को (दिनांक 7 जुलाई, 2010 के पत्र द्वारा) सूचित किया गया कि मौखिक बहस उसी स्थान पर रविवार 18 जुलाई, 2010, को (पूरे दिन के लिए) और सोमवार 19 जुलाई, 2010 को मध्यान्ह पश्चात् 2 बजे से बहस के समाप्त होने तक होंगी। 18 और 19 जुलाई, 2010 को सुनवाई के दौरान (24 जून, 2010 को हुई पिछली सुनवाई की तरह साक्ष्य प्राप्त करने के लिए) पहले वाले अधिवक्तागण ही उपस्थित थे और उन्होंने मौखिक बहस कीं। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन व्यक्तिगत रूप से स्वयं वहाँ उपस्थित नहीं थे। बहस समाप्त होने के लगभग एक सप्ताह पश्चात्, समिति की सहायता के लिए नियुक्त अधिवक्ताओं ने और न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के अधिवक्ताओं ने संक्षिप्त लिखित तर्क प्रस्तुत किए।

IV. तथ्य : सौमित्र सेन के आचरण की जांच और इस मामले में अभिलिखित तथ्यों का जांच समिति द्वारा मूल्यांकन: अवचार के दो आधारों के संबंध में- अर्थात्

(i) कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर की हैसियत से उनके द्वारा प्राप्त की गई बड़ी धनराशि का दुर्विनियोजन और (ii) कलकत्त उच्च न्यायालय के समक्ष धनराशि के दुर्विनियोजन के संबंध में तथ्यों का दुर्व्यपदेशन- के संबंध में सौमित्र सेन के संपूर्ण आचरण की जांच कर रही जांच समिति की जांच में 30 अप्रैल, 1984 से दिसम्बर, 2006 तक की लंबी अवधि शामिल है; इसी बीच 12 दिसम्बर, 2003 को सौमित्र सेन को, जो तब तक कलकत्ता उच्च न्यायालय में एक अधिवक्ता थे, इस

न्यायालय में एक न्यायाधीश के रूप में नियुक्त कर दिया गया था। इस आचरण से संबंधित तथ्य जिन्हें इस जाँच के अभिलेख में लाया गया है, को सुविधा (और केवल सुविधा के लिए) के लिए दो समयावधियों में विभाजित किया गया है - यद्यपि इन दोनों के बीच निरंतरता का एक साळा सूत्र है: अर्थात्

(1) 30 अप्रैल, 1984 से 3 दिसम्बर, 2003 तक के बीच अधिवक्ता सौमित्र सेन का आचरण; और

(2) 3 दिसम्बर, 2003 के पश्चात् न्यायाधीश सौमित्र सेन का आचरण।

(1) 30 अप्रैल, 1984 से 3 दिसम्बर, 2003 तक के बीच अधिवक्ता सौमित्र सेन का आचरण

(क) वर्ष 1983 के वाद संख्या 8 (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लिमिटेड बनाम शिपिंग कार्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड और अन्य) में एक रिसीवर की नियुक्ति के लिए एक अंतर्वर्ती आवेदन में कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति आर. एन. पाइने द्वारा दिनांक 30 अप्रैल, 1984 को एक आदेश दिया गया था। इस आदेश द्वारा अधिवक्ता श्री सौामित्र सेन को "इस याचिका के पैराग्राफ 19 में उल्लिखित बोकारो इस्पात संयंत्र के कोक ओवेन रिफ्रेक्टरी स्टोर के कवर शेड संख्या 1 में पड़ी अस्वीकृत वस्तुओं" के लिए रिसीवर के पद पर नियुक्त किया गया था, जिसके द्वारा उन्हें सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के खण्ड (घ) के आदेश XL[5] नियम 1 में प्रदत्त सभी शक्तियों के साथ उक्त परिसर में प्रवेश करने और उक्त वस्तुओं के संबंध में बकाया ऋणों और बकाया दावों को संग्रहित करने की शक्ति दी गई थी।" यह आदेश भी विशिष्ट रूप से दिया गया था कि रिसीवर को उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार के कार्यालय में अपने अर्धवार्षिक लेखों को दाखिल और पास करने हेतु प्रस्तुत करना चाहिए; ऐसे लेखों को प्रत्येक वर्ष के जून और दिसम्बर महीनों के अंत में तैयार करना होता है और उन्हें क्रमश: अगले जुलाई और जनवरी माह के दौरान दाखिल करना होता है और यह कि उन्हें दाखिल किए जाने के पश्चात् उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के समक्ष स्वीकृत कराया जाए; अन्य बातों के साथ-साथ यह आदेश भी दिया गया था कि रिसीवर को उक्त वस्तुओं को या तो उनके लिए मिल सकने वाले सर्वोत्तम क्रेता या क्रेताओं को बेचना चाहिए या ऐसी बिक्री के बारे में आवश्यक विळापन प्रकाशित किए जाने के बाद निजी करार द्वारा इनकी बिक्री करनी चाहिए। अन्य बातों के साथ-साथ यह आदेश भी दिया

गया कि "इसमें शामिल पक्षकारों को बिक्री प्रक्रिया पूरी होने के पश्चात् इस न्यायालय के समक्ष रिसीवर के अंतिम पारिश्रमिक के निर्धारण" और "विक्रय से प्राप्त राशि के समुचित निवेश के लिए अन्य निर्देश प्राप्त करने हेतु उल्लेख करने की स्वतंत्रता होगी।" बाद में दिनांक 11.07.1985 के एक आदेश[6] द्वारा यह स्पष्ट किया गया था कि श्री सौमित्र सेन जमानत राशि जमा कराए बिना रिसीवर के तौर पर कार्य करेंगे।

(ख) दिनांक 20 जनवरी 1993 से पहले 1983 के वाद संख्या 8 में नियुक्त रिसीवर के रूप में श्री सौमित्र सेन द्वारा वस्तुओं के काफी हिस्से की बिक्री कर दी गई। कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 20 जनवरी, 1993 को दिए गए एक आदेश[7] (1983 का वाद संख्या 8) द्वारा तत्पश्चात् यह आदेश दिया गया कि:-

> "जब कभी भी क्रय कीमत अदा की जाएगी तब विद्वान रिसीवर उसमें से उसका 5 प्रतिशत अपने पारिश्रमिक के रूप में काट लेगा और शेष राशि को अपनी पसंद के किसी बैंक और अपनी पसंद की किसी शाखा में एक पृथक खाते में रखेगा और न्यायालय के अगले आदेश के अधीन उसे धारणाधिकार या भारग्रस्तता से मुक्त रखेगा।"
> (इस बात पर विशेष बल दिया गया)

(ग) जैसा कि प्रतिरक्षा के उनके लिखित कथन (3 मई, 2010 को जाँच समिति के समक्ष प्रस्तुत) में स्वीकार किया गया था, सौमित्र सेन को 1/4/1993 और 1/6/1995 के बीच रिसीवर के तौर पर 33,22,800/- रुपये की कुल राशि प्राप्त हुई थी जो उन वस्तुओं के एक बड़े हिस्से के विक्रय से प्राप्त आय थी जिनके रिसीवर के तौर पर उन्हें नियुक्त किया गया था। परन्तु अर्द्ध-वार्षिक लेखे दाखिल करने और उसे स्वीकृत करवाने का दायित्व जो दिनांक 30 अप्रैल, 1984 के आदेश[8] - और कलकत्ता उच्च न्यायालय के मूल शाखा नियम के अंतर्गत उन पर लागू किया गया था - का किसी भी समय पालन या अनुपालन नहीं किया गया; न तो उस पूरी अवधि में जब वह अधिवक्ता रहे और न ही उसके बाद जब वह न्यायाधीश के रुप में नियुक्त हुए।

(घ) समुचित अभिरक्षा से अनेक दस्तावेजों को उन्हें प्रस्तुत करने के लिए बुलाये गए साक्षियों (अर्थात् सी डब्ल्यू 1 सहायक रजिस्ट्रार, कलकत्ता उच्च न्यायालय, मूल शाखा और सी डब्ल्यू 2 मुख्य प्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक (सेवा शाखा), सी डब्ल्यू 4 (इलाहाबाद बैंक स्टीफन हाउस शाखा के ऋण प्रबंधक) और सी डब्ल्यू 5 (प्रबंधक,

आंतरिक सेवाएं, स्टैण्डर्ड चार्टर्ड बैंक; 19 नेताजी सुभाष रोड शाखा (पूर्व में ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक) के साक्ष्य द्वारा अभिलेखबद्ध किया गया।

(ङ) मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य से यह साबित हुआ है कि रिसीवर के तौर पर सौमित्र सेन द्वारा एक नहीं बल्कि दो पृथक खाते, प्रत्येक अपने स्वयं के नाम से, खुलवाये गए थे: (i) प्रथमत: सौमित्र सेन द्वारा बचत खाता संख्या 01SLP0632800, 4.3.1993 को ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक, चर्च लेन शाखा, कलकत्ता में खुलवाया गया (जिसे सुविधा और पहचानने में आसानी के लिए एतद्पश्चात् "ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक रिसीवर्स खाता" कहा गया है);[9] (ii) सौमित्र सेन द्वारा दूसरा बचत बैंक खाता 9902 इलाहाबाद बैंक, "स्टीफन हाउस शाखा, कलकत्ता[10] में दिनांक 24.03.1993 को खुलवाया गया (जिसे सुविधा और पहचानने में सरलता के लिए एतद्पश्चात् "इलाहाबाद बैंक रिसीवर्स खाता" कहा गया है)। इस प्रकार खुलवाये गए दोनों खाते रिसीवर के तौर पर सौमित्र सेन के खाते थे: इन्हें समग्र रूप से "रिसीवर के दो खाते" कहा गया है।

(च) जैसा कि साक्ष्य में खुलासा किया गया था 33,22,800 रुपये की कुल राशि जो वस्तुओं के विक्रय से प्राप्त आय थी (जिसका सौमित्र सेन को रिसीवर नियुक्त किया गया था) को 24 मार्च, 1993 और 5 मई, 1995 के बीच की अवधि के दौरान रिसीवर के दो खातों में जमा कराया गया जैसा कि नीचे बताया गया है:-

(i) ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक के रिसीवर्स खाते में भारतीय स्टेट बैंक द्वारा सौमित्र सेन के नाम से (वस्तुओं के क्रेता के कहने पर) जारी किए गए 18 मूल डिमांड ड्राफ्टों की कुल राशि के माध्यम से 28,54,800 रुपये की कुल राशि जमा करवाई गई; इन डिमांड ड्राफ्टों की मूल प्रतियाँ साक्ष्य के रुप में एक विवरण के साथ प्रस्तुत की गई हैं (सी डब्ल्यू 2, श्री सत्यलाल मंडल, मुख्य प्रबंधक, भारतीय स्टेट बैंक, सेवा शाखा, कोलकाता द्वारा अभिसाक्ष्य दिया गया) जिसमें यह दर्शाया गया है कि 18 डिमांड ड्राफ्टों की कुल धनराशि को ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक रिसीवर्स खाते[11] में जमा कराया गया था।"

(ii) इलाहाबाद बैंक के रिसीवर खाते में 4,68,000/- रुपये की कुल राशि को 4,50,000/- रुपये और 18,000 रुपये के दो भागों में जमा कराया गया था; (पहली राशि भारतीय स्टेट बैंक द्वारा सौमित्र सेन के नाम से जारी दो डिमांड

ड्राफ्टों द्वारा और बाद की राशि दो बैंकर्स चैकों (बैंक ऑफ मदुरै द्वारा जिसका बाद में आई.सी.आई.सी.आई. बैंक द्वारा अधिग्रहण कर लिया गया) वह भी सौमित्र सेन के नाम से थे,[12] जमा कराया गया था) जैसा कि सी डब्ल्यू 2 मुख्य प्रबंधक भारतीय स्टेट बैंक (सेवा शाखा) कोलकाता द्वारा और साक्षी सी डब्ल्यू 4 इलाहाबाद बैंक स्टीफन हाउस शाखा के प्रबंधक (ऋण) द्वारा प्रस्तुत खाता विवरण द्वारा साक्ष्य दिया गया है।

(छ) "न्यायमूर्ति सौमित्र सेन" द्वारा हस्ताक्षरित 3 मई, 2010 को दाखिल किए गए प्रतिरक्षा के लिखित कथन में स्पष्ट रुप से जोर देकर यह कहा गया है:-

(i) कि इस धनराशि (33,22,800 रुपये) को वापस करने का कोई अवसर नहीं मिला क्योंकि .....

(घ) विक्रय की संपूर्ण राशि को लिंक्स इंडिया प्रा. लि. में आवधिक जमा में निवेश कर दिया गया जिसका बिक्री की राशि को निवेश किए जाने के काफी समय पश्चात् वर्ष 1999-2000 में परिसमापन हो गया "(पैराग्राफ 7 (घ)"; और

(ii) कि "किसी भी समय किसी धनराशि का उपयोग व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं किया गया या अस्थायी अथवा स्थायी रुप से उनका दुर्विनियोजन नहीं किया गया।" (पैराग्राफ 5)

(ज) यदि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा उनके प्रतिरक्षा के लिखित कथन (3 मई, 2010 को जाँच समिति के समक्ष प्रस्तुत) में उनके पूर्वोक्त कथन जाँच के दौरान अभिलेखबद्ध किए गए दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा संपुष्ट हो जाते तो आगे जाँच करना अनावश्यक हो जाता; क्योंकि स्पष्ट रूप से अनुपालन नहीं किए जाने और न्यायालय के आदेशों का स्पष्ट उल्लंघन जैसे धनराशि को एक खाते में नहीं रखना बल्कि दो खातों में रखना, न्यायालय के आदेशों के अधीन उसे (केवल) उन खातों में नहीं 'रखना', विक्रय से प्राप्त आय (33,22,800 रुपये) को निवेश या अन्यथा के रूप में विलगन करने के लिए न्यायालय की अनुमति नहीं लेना- के बावजूद - रिसीवर के दो खातों से धनराशि का वस्तुत: कोई "दोषपूर्ण विनियोजन" नहीं हुआ होता।

(ळा) तथापि जाँच समिति के समक्ष रखे गए दस्तावेजी साक्ष्य स्पष्ट रूप से इस बात का खुलासा करते हैं कि वस्तुओं के विक्रय से प्राप्त की गई विक्रय आय की संपूर्ण राशि

या उसके किसी भाग (अर्थात् 33,22,800 रुपये की राशि) का सौमित्र सेन द्वारा (रिसीवर के रूप में) लिंक्स इंडिया लिमिटेड में निवेश नहीं किया गया था; इसके विपरीत अभिलेखबद्ध किए गए दस्तावेजी साक्ष्य[13] यह दर्शाते हैं कि लिंक्स इंडिया लिमिटेड के पास 25 लाख रुपये की राशि- रिसीवर के दो खातों (एएनजेड ग्रिंडलेज बैंक रिसीवर खाता या इलाहाबाद बैंक रिसीवर खाता) में से किसी में से भी नहीं बल्कि एक बिल्कुल अलग (तीसरे) खाते से जमा कराई गई थी जिसे सौमित्र सेन द्वारा उनके स्वयं के नाम से (जिसे पहली बार उनके द्वारा 6 फरवरी, 1997 को खोला गया था)- एएनजेड ग्रिंडलेज बैंक, चर्च लेन खाखा, कलकत्ता में ही खुलवाया गया था (अर्थात् खाता संख्या 01SLP0813400) जिसे सुविधा और पहचान की सरलता के लिए एतद्पश्चात् "400 खाता" कहा गया है। केवल इसी "400 खाते" से (न कि रिसीवर के दोनों खातों में से किसी खाते से) ही 27.02.1997 को लिंक्स इंडिया लिमिटेड के पास 25 लाख रुपये की राशि जमा कराई गई थी[15]; और 25 लाख रुपये की यह राशि सौमित्र सेन द्वारा प्राप्त पृथक निधि (70 लाख रुपये) से दी गई थी- और न कि उन वस्तुओ के विक्रय से प्राप्त आय से जिनका उन्हें दिनांक 30 अप्रैल 1984 के आदेश द्वारा रिसीवर नियुक्त किया गया था- बल्कि यह राशि उन्हें एक बिल्कुल पृथक पद पर रहते हुए एक भिन्न स्रोत से और एक पूर्णत: भिन्न कार्यवाही में प्राप्त हुई थी; एक कार्यवाही जिसमें कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा "कर्मकारों को वितरित करने के लिए" कलकत्ता फैन्स (1995) प्राइवेट लिमिटेड (समापन में) के लिए उच्च न्यायालय के शासकीय समापक द्वारा 70 लाख रुपये की एक विशिष्ट राशि एक अलग कार्यवाही में दिए गए पृथक आदेशों द्वारा सौमित्र सेन को विशेष अधिकारी के रूप में सौंपी गई थी।

(ञ) जांच के दौरान जांच समिति द्वारा सी.डब्ल्यू-3, कलकत्ता उच्च न्यायालय के शासकीय समापक के प्राधिकृत प्राधिकारी को समन किया गया और उनकी ओर से सौमित्र सेन द्वारा हस्ताक्षरित दिनांक 27 फरवरी, 1997 के आवेदन पत्र को प्रस्तुत किया गया जिसमें ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक के खाता सं. 400 से सौमित्र सेन द्वारा आहरित चेक की संख्या- चेक सं. 624079 बताई गई; इस चेक सं.: 624079 के आगम का उपयोग पांच लाख रूपए के पांच अलग-अलग उपयोजनों हेतु किया गया, जिसके संबंध में लिंक्स इंडिया लिमिटेड द्वारा "सौमित्र सेन" के पक्ष में पांच अलग-अलग आवधिक जमा

पत्र (11349, 11350, 11351, 11352 एवं 11353 की संख्या वाले)[17] जारी किए गए: जैसा कि ऊपर बताया गया है, सौमित्र सेन द्वारा 25 लाख रूपए के चेक सं. 624079 की निकासी रिसीवर के दो खातों में से किसी से नहीं बल्कि ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक के खाता सं. 400 से की गई: जैसा की सी. डब्ल्यू. -5- प्रबंधक, आंतरिक सेवा, स्टैण्डर्ड चार्टर्ड बैंक (ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक का उत्तरवर्ती बैंक) द्वारा प्रस्तुत खाता सं. 400 के बैंक विवरण से स्पष्ट है।

(ट) खाता सं. 400 (गैर-रिसीवर खाता) में से लिंक्स इंडिया लिमिटेड के पास जमा के रूप में दिखाई गई 25 लाख रूपए की राशि के अलावा रिसीवर के दो खातों में से किसी में भी लिंक्स इंडिया लिमिटेड के पास जमा/निवेश के रूप में कोई अतिरिक्त राशि नहीं दिखाई गई है। साक्ष्य के रूप में रिसीवर के दो खातों के निम्नलिखित बैंक विवरणों को प्रस्तुत किया गया है: अर्थात् (i) संदर्भ: खाता सं. 9902, इलाहाबाद बैंक, स्टीफन हाउस शाखा, अपने प्रारंभ अर्थात् 24 मार्च, 1993 से 2009 तक सौमित्र सेन के नाम से;[18] इसमें लिंक्स इंडिया लिमिटेड को भुगतान दर्शानेवाली कोई प्रविष्टि नहीं है, और (ii) खाता सं.: 01एसएलपी0632800, ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक, चर्च लेन शाखा, 28 फरवरी, 1995 से 22 मार्च, 2000 को खाता बंद के रूप में दर्शाए जाने के समय तक;[19] इस पूरी अवधि (28 फरवरी, 1995 से इसके बंद होने तक) में लिंक्स इंडिया लिमिटेड को कोई भुगतान दर्शानेवाली कोई प्रविष्टि नहीं है। जहां तक 28-2-1995 से पूर्व की अवधि का संबंध है, इस रिसीवर के खाता सं.: 01एसएलपी0632800 से लिंक्स इंडिया लिमिटेड को कोई भुगतान नहीं हो सकता था क्योंकि यह सौमित्र सेन का स्पष्ट मामला था कि ऐसा केवल 30.4.1995 के बाद ही हुआ, (जब रिसीवर के रूप में उनके द्वारा बेची गई वस्तुओं के खरीददार द्वारा उन्हें धनराशि का भुगतान किया गया) कि लिंक्स के पास आवधिक जमा राशि की शुरूआत की गई - ऐसा भारत के मुख्य न्यायाधीश को सम्बोधित न्यायमूर्ति सेन के दिनांक 25.2.2008 के पत्र में कहा गया है (न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के प्रतिरक्षा के लिखित कथन के संलग्नक के रूप में रखा गया)।

(ठ) इस प्रकार, इस जांच के रिकार्ड में लाया गया प्रचुर साक्ष्य यह साबित करता है कि दिनांक 3 मई, 2010 को जांच समिति के समक्ष दायर प्रतिरक्षा के लिखित कथन में

यह प्राख्यान कि "विक्रय से हुई संपूर्ण आय लिंक्स इंडिया लिमिटेड के पास आवधिक जमा राशियों में निवेश की गई....." सत्य नहीं है।

(ड) न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने जांच समिति के समक्ष न तो कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया, न कोई कथन प्रस्तुत किया और न ही किसी सुनवाई में व्यक्तिगत रूप से उपस्थित हुए ताकि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन स्वयं जांच समिति को आश्वस्त कर सकें: कि 33,22,800 रूपए का वास्तव में कैसे निवेश किया गया और कहां एवं कैसे इस धनराशि को व्यय किया गया; इस मामले में प्रस्तुत बैंक विवरणों के बीच प्रकट एवं स्पष्ट अन्तर्विरोध तथा प्रतिरक्षा के उनके लिखित कथन में उनका पिछला प्राख्यान- अर्थात्, कि लिंक्स इंडिया लिमिटेड जो वर्ष 1999-2000 में समापन में चली गई, में 33,22,800 रूपए की संपूर्ण राशि का निवेश किया गया था- स्पष्टीकरण की मांग करता था: ये न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की व्यक्तिगत एवं विशेष जानकारी के तथ्य थे- लेकिन जांच समिति के समक्ष कार्यवाहियों में उपस्थित होने अथवा व्यक्तिगत रूप से भाग लेने से इनकार कर न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने स्वयं को स्पष्टीकरण (यदि उनके पास कोई था) प्रस्तुत करने के अवसर से वंचित कर दिया। यह स्वयंसिद्ध और प्राय: साक्ष्य का सार्वभौम नियम (उदाहरणार्थ भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106 को देखें) है कि जबकि तथ्य असाधारण और अपवादिक रूप से किसी व्यक्ति के ज्ञान में है, तब उस तथ्य को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर है।[20]

(ढ) इसके प्रतिकूल किसी विश्वसनीय स्पष्टीकरण का अभाव है जो इस जांच के रिकार्ड में लाए गए दस्तावेजों से साबित होता है कि लिंक्स इंडिया लिमिटेड के पास निवेशित 33,22,800 रूपए (वस्तुओं की बिक्री से हो रही आय जिसका रिसीवर सौमित्र सेन को नियुक्त किया गया) की धनराशि में से नहीं था बल्कि कलकत्ता फैन्स (1995) प्राइवेट लिमिटेड (समापनाधीन) - एक पूर्णत: भिन्न कार्यवाही अर्थात् कलकत्ता फैन्स वर्कर्स एम्पलाइज यूनियन बनाम शासकीय समापक- "सी.पी.सं.: 226/1996 में अपील सं.:-/1996" (कलकत्ता उच्च न्यायालय में) में दिनांक 20.1.1997 तथा 30.01.1997[21] के कलकत्ता उच्च न्यायालय के आदेश से - के शासकीय समापक द्वारा विशेष अधिकारी के रूप में सौमित्र सेन को सौंपी गई 70 लाख रूपए की राशि में से था।

(ण) यह विचार करना अभी शेष है कि क्या न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के प्रतिरक्षा के लिखित कथन[22] में पुन: प्राख्यान अर्थात् कि "किसी भी समय किसी धनराशि का व्यक्तिगत लाभों हेतु उपयोग अथवा अस्थायी या स्थायी तौर पर दुर्विनियोजन नहीं किया गया" सही है या गलत। इस प्राख्यान की जांच न केवल यह प्रकट करता है कि रिसीवर के दो खातों से बड़ी धनराशि का अंतरण हुआ है : पहले खाता संख्या 400 (गैर रिसीवर खाता) से - सौमित्र सेन को रिसीवर नियुक्त करनेवाले न्यायालय के किसी प्राधिकार या अनुमति के बिना- और तत्पश्चात् खाता संख्या 400 से कई लाख रूपए का वहां से संवितरण (सौमित्र सेन को रिसीवर नियुक्त करने वाले न्यायालय द्वारा पुन: बिना किसी प्राधिकार या अनुमति के) इस अपयोजन के ब्यौरे संक्षेप में नीचे दिए गए हैं:-

(i) दिनांक 6 मार्च, 1995 को सौमित्र सेन ने ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक के रिसीवर खाते की धनराशि में से 8,73,968/- रूपये की मूल राशि के आवधिक जमा पत्र (स्वयं के नाम से) प्राप्त किए और 4 दिसम्बर, 1995 को ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक के इसी रिसीवर खाते से सौमित्र सेन ने 9,80,000/- रूपये की मूल राशि के द्वितीय आवधिक जमा पत्र (फिर से स्वयं के नाम से) जारी करवाए। इन प्रत्येक दो आवधिक जमा राशियों के लिए आवधिक जमा पत्रक (इन कार्यवाहियों के रिकार्ड में लाई गई) दर्शाते हैं कि मई 1997 तक 8,73,968/- रूपये एवं 9,80,000/- रूपये की उक्त प्रत्येक दो धनराशियां बढ़कर (संचित ब्याज के परिणामस्वरूप) (i) 10,91,011.49 रूपये[23] (अर्थात् 8,73,968/- रूपये और ब्याज) तथा (ii) 11,32,999.92 रूपये[24] (अर्थात् 9,80,000/- रूपये और ब्याज) हो गई थीं: सभी का पूर्णयोग 22,24,011.41 रूपये था।

(ii) बैंकों के गवाहों के माध्यम से रिकार्ड में लाए गए दस्तावेज भी प्रकट करते हैं कि "सौमित्र सेन" के मुद्रित लेटर हेड पर दिनांक 22.5.1997[25] के हस्तलिखित तथा स्वयं द्वारा हस्ताक्षरित (प्रबंधक, ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक को संबोधित) पत्र द्वारा "22 लाख रूपए की अनुमानित राशि" को भुनाने तथा इसे "मेरे अन्य खाते" में जमा करने का अनुरोध किया गया," चूंकि मुळो इस राशि की तत्काल आवश्यकता है क्योंकि शीघ्र ही काफी भुगतानों का संवितरण किया जाना है।" रिकार्ड में लाए गए उक्त दस्तावेज यह भी दर्शाते हैं कि ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक को संबोधित दिनांक 22.05.1997[26] के ही दूसरे पक्ष द्वारा- (सौमित्र सेन द्वारा ही हस्ताक्षरित)- प्रबंधक

से ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक रिसीवर खाता के नामे डालने तथा "22,93,000 की राशि को मेरे ए.एन.जेड. बचत खाता संख्या 400[27] (जो एक गैर-रिसीवर खाता था)" में अंतरित करने का अनुरोध किया गया। चूंकि ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक रिसीवर खाते में कुल उपलब्ध बकाया राशि केवल 22,84,000/- रूपए थी (सौमित्र सेन द्वारा बैंक प्रबंधक को संबोधित दिनांक 22-05-1997 के पत्र के पाद-भाग में नोट की गई राशि), बैंक ने केवल 22,83,000/- रूपए की राशि को इस खाते के नामे डाला तथा 22,83,000/- रूपए को "खाता संख्या 400" जो सौमित्र सेन के नाम से गैर-रिसीवर खाता था, में जमा किया।

(iii) गवाह सी.डब्ल्यू. 5, स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक, कोलकाता (ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक का उत्तरवर्ती बैंक) के आंतरिक सेवाओं का प्रबंधक होने के कारण, उन्होंने इस प्रकार की गई अंतरण प्रविष्टियों को प्रस्तुत किया जिनका अनुरोध दिनांक 22 मई 1997 (इस कार्यवाही में प्रस्तुत)[28] के न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के दो पत्रों में किया गया था। सी. डब्ल्यू.-5 की प्रतिपरीक्षा में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के काउंसेल ने गवाह को यह सुळााव नहीं दिया कि ये दो पत्र सौमित्र सेन द्वारा लिखित या हस्ताक्षरित नहीं थे और न ही कांउसेल ने प्रतिपरीक्षा में इनमें से किसी पत्र की प्रामाणिकता और न ही बैंक खातों में अंतरण प्रविष्टियों और न ही वाउचरों/अंतरण निर्देशों पर प्रश्न किया।[29]

(iv) "शीघ्र ही काफी भुगतानों का संवितरण किए जाने हेतु इस धनराशि (22,83,000 रूपए) की तत्काल" (बैंक प्रबंधक को सौमित्र सेन के दिनांक 22 मई, 1997[30] के हस्तलिखित पत्र में यथा वर्णित) बताई गई आवश्यकता स्वयं दर्शाता है कि वस्तुओं के बिक्री-आगमों (33,22,800 रूपए) के हिस्से का उन उद्देश्यों के लिए अन्यत्र प्रयोग किया गया, जिनका सौमित्र सेन को रिसीवर नियुक्त करनेवाले आदेशों में विचार किया गया था। - यदि धनराशि की अलग मामले में कर्मकारों को भुगतान के लिए तुरन्त आवश्यकता थी अर्थात् कलकत्ता फैन्स (1995) प्राइवेट लिमिटेड (समापनाधीन) के मामले में मजदूरों के भुगतान हेतु तत्काल आवश्यकता थी ("संदर्भ: 01एसएलपी/063/800" शीर्ष वाले दिनांक 22/5/1997 के पत्र में कहा गया है) और धनराशि का अंतरण रिसीवर के खाते से उस प्रयोजनार्थ किया गया, तो यह स्वयं 1983 के वाद सं.8 में वस्तुओं के बिक्री आगमों के रिसीवर के रूप में

सौमित्र सेन द्वारा प्राप्त धनराशि के दुरूपयोजन को दर्शाता है। कोलकाता फैन लिमिटेड के कर्मकारों के भुगतान के प्रयोजन के लिए उन्हें (सौमित्र सेन को) रिसीवर के दो में से किसी भी खाते की धनराशि के इस्तेमाल के लिए न तो प्राधिकृत किया गया था और न ही उन्होंने न्यायालय तक की अनुमति ली। सौमित्र सेन को, एक भिन्न और पृथक् कार्यवाही में कलकत्ता न्यायालय के पृथक् आदेश[31] द्वारा "विशेष अधिकारी" के रूप में नियुक्त किया गया था और विशेष अधिकारी के नाते उन्हें निर्दिष्ट प्रयोजन (कर्मकारों के भुगतान के लिए) के लिए 70 लाख रुपये की अलग धनराशि विशेष रूप से सुपुर्द की गई थी।

(v) परन्तु इतनी ही नहीं। एएनज़ेड ग्रिन्ड्लेज़ बैंक के रिसीवर के खाते से खाता सं. 400 में (सौमित्र सेन के नाम का गैर-रिसीवर खाता) 22,83,800/-रूपये (जो स्वीकार्य रूप से माल की विक्रय राशि 33,22,000/- रूपये) (और उस पर ब्याज) थी जो कि 1983 के वाद सं. 8 की विषय वस्तु है) के अंतरण के पश्चात् 22 मई, 1997 से 01.07.1997 तक बड़ी राशियों का संवितरण (खाता सं. 400 में से) सभी 45 चेकों[32] को जारी करके उनके नकदीकरण से हुआ, उनमें से प्रत्येक पर सौमित्र सेन के हस्ताक्षर थे (प्रत्येक चेक साक्ष्य में दर्शाया गया है): इनमें से 18[33] चेकों को धारक चेकों के रूप मे दर्शाया गया है जिनकी कुल राशि लगभग 9.57 लाख रुपये है- यथा "---------- को अदा करें या धारक शीर्षक के धारक चेक। अपने, हस्ताक्षरित परन्तु बिना शपथ प्रतिरक्षा के लिखित कथन में सौमित्र सेन ने यह स्पष्टीकरण (पैरा 47 में) दिया कि यह संवितरण, खंडपीठ के दिनांक 20.01.1997 के आदेश के अनुसरण में (----------) कर्मकारों की देय राशियों के भुगतान के लिए था"। परन्तु खंडपीठ का यह विशिष्ट आदेश (20.01.1997 का)[34] 1983 के वाद सं. 8 अथवा उस वाद के किसी अन्तवर्ती आवेदन में पारित नहीं किया गया था बल्कि सिविल याचिका सं. 226/1996 कलकत्ता फैन वर्कर्स इम्प्लॉईज यूनियन और अन्य बनाम शासकीय समापक और अन्य जैसी बिल्कुल की अलग कार्यवाही में पारित किया गया था जिसका 1983 के वाद सं. 8 से किसी प्रकार का कोई संबंध नहीं था; शासकीय समापक द्वारा (उनके पास उपलब्ध पृथक निधि से) 70 लाख रूपये गैर-रिसीवर के विशिष्ट प्रयोजन के

लिए खाता नं. 400 में जमा कराए गए; 70 लाख रूपये में से कर्मकारों की देय राशियों का भुगतान किया जाना था।

इसके अलावा इस जांच के दौरान 'कर्मकारों' की कोई सूची प्रस्तुत (न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा अथवा उनकी ओर से) नहीं की गई जिनके नाम चेक (एग्ज़िबिट सी-219 से 233 तक, एग्ज़िबिट सी-258 से सी-262 तक) जारी होने की बात कही जा सकती है, ताकि प्रथम दृष्ट्या (अभिलिखित और एग्ज़िबिट में रखे गये चेकों पर लिखे गये नामों की तुलना करके) यह स्थापित हो कि "पहचाने गए कर्मकारों" के नाम उन नामों के साथ मेल खा रहे हैं।

(vi) यह सारी बातें स्पष्ट रूप से इस बात को दर्शाती हैं कि रिसीवर के एएनजेड ग्रिन्डलेज़ बैंक रिसीवर खाते से पहले 22 मई, 1997 को 22,83,000/- रूपये की बड़ी राशि "खाता सं. 400 (सौमित्र सेन द्वारा स्वयं अपने नाम में खोला गया गैर-रिसीवर खाता) में अपयोजित की गई और बाद में गैर रिसीवर के खाते (खाता सं. 400) में जमा कराई गई 22,83,000/- रूपये की धनराशि विभिन्न व्यक्तियों और पक्षकारों में संवितरित की गई जिसमें लगभग 9.57 लाख रूपये की कुल राशि शामिल है जिसमें सौमित्र सेन द्वारा हस्ताक्षरित 18[35] धारक चकों (अलग-अलग नामों में) की राशि दर्शायी गई थी और ऐसे प्रत्येक चेक पर बैंक की मुहर थी जिस पर "तारीख", "प्रदत्त नकद राशि" और उस बैंक की शाखा पृष्ठांकित थी जिससे "नकद राशि" का भुगतान किया गया था।

(vii) इलाहाबाद बैंक के रिसीवर खाते से भी 24.3.1994 के दौरान रिसीवर की 4,68,000 रूपये की राशि आहरित करके संवितरित की गई है, सौमित्र सेन द्वारा हस्ताक्षरित चेकों के जरिए आहरण किया गया था जिससे 29.3.1994 को केवल 3215 रूपये उनके खाते में बचे थे। कुल 1,39,514 रूपये के पांच चेक (4 धारक चेक और एक खाता आदाता चेक)[36] जो एग्ज़िबिट किए गए हैं और सौमित्र सेन द्वारा हस्ताक्षरित के रूप में दर्शाए गए हैं, वे अन्य पक्षकारों के नाम हैं जो रिसीवर की निधि से जारी किए गए हैं [जो सौमित्र सेन द्वारा (अथवा उनकी ओर से) स्पष्ट नहीं किया गया है]। इसी प्रकार से 28.02.1995 को ए.एन.जेड. ग्रिन्डलेज़ बैंक का रिसीवर खाता विवरण केवल 8,83,963.00 रूपये और 05 पैसे की राशि को दर्शाता है (28.2.1995

को)। यद्यपि उस तारीख तक सामान की बिक्री से प्राप्त 19,89,000 रूपये की बड़ी राशि, जिसके लिए सेन को रिसीवर के रूप में नियुक्त किया गया, इस खाते में पहले ही जमा कर दी गई थी। इस अंतर को भी न तो स्पष्ट किया गया है और न ही इसका हिसाब दिया गया है। 28.2.1995 के बाद भी, 5 मई, 1995 तक 8,65,000 रूपये की धनराशि जमा कराई गई। बाद में ग्यारह स्व-आहरण के चेक (अर्थात् सौमित्र सेन द्वारा आहरण) और "एस.सी. सरकार एण्ड सन्स" को दो भुगतान (चेक से) तथा कुछ क्रेडिट कार्ड देयताओं के लिए तीन भुगतान किए गए।[37] इनमें से किसी प्रविष्टि के बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं है। अंतत: इलाहाबाद बैंक रिसीवर के खाते में 31 मई, 2008 को खाता शेष "शून्य"[38] दर्शाया गया है तथा एएनजेड ग्रिन्डलेज़ बैंक रिसीवर के खाते में 22 मार्च, 2000 को अंतिम खाता शेष भी "शून्य"[39] दर्शाया गया है और खाते को बंद किया गया दर्शाया गया है।

(त) जांच समिति के आकलन में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा अपने पक्ष में प्रतिरक्षा के लिखित कथन में प्रस्तुत सकारात्मक दावा, कि किस प्रकार सामान की बिक्री से प्राप्त राशि का विनियोजन/निवेश किया गया, जिसके लिए उसे रिसीवर के रूप में नियुक्त किया गया था, ळूठ साबित हुआ है। प्रतिरक्षा के लिखित कथन में यह दावा कि "किसी भी समय किसी भी धनराशि का इस्तेमाल वैयक्तिक लाभ के लिए नहीं किया गया अथवा धनराशि को अस्थायी या स्थायी रूप से दुर्विनियोजित नहीं किया गया" ळूठ साबित हुआ है।

(थ) यदि शपथ न लिए गए प्रतिरक्षा के हस्ताक्षरित लिखित कथन पर गौर नहीं भी किया जाता, विशेष रूप से इसलिए क्योंकि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन कथन की विषय वस्तु के सत्य होने की पुष्टि के लिए जांच समिति के समक्ष वैयक्तिक रूप से उपस्थित नहीं हुए, तो भी अभिलिखित उपरोक्त साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि सौमित्र सेन को रिसीवर के रूप में नियुक्त करने वाले न्यायालय के आदेशों के उल्लंघन में रिसीवर द्वारा बड़ी निधि (33,22,800 रूपये की विक्रय राशि) का अपयोजन/परिवर्तन हुआ है जो ऐसे प्रयोजनों के लिए निधि का अपयोजन/परिवर्तन है जो पूर्णतया अनधिकृत थे और जिनके बारे में अभी तक कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है।

(2) 3 दिसम्बर, 2003 के पश्चात् ऊपर बताई गई घटनाओं के संबंध में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन का आचरण।

ऊपर जो भी बताया गया है उस अवधि में घटित हुआ जब सौमित्र सेन रिसीवर, एक अधिवक्ता थे। जांच समिति का आकलन यह है कि अधिवक्ता के रूप में और कलकत्ता उच्च न्यायालय के अधिकारी होने के नाते सौमित्र सेन का आचरण (3 दिसम्बर, 2003 से पहले उनके विभिन्न कृत्य और भूलचूक) गलत था और किसी अधिवक्ता, उच्च न्यायालय के अधिकारी से अपेक्षित नहीं था। परन्तु उनके न्यायाधीश के रूप में नियुक्त हो जाने के पश्चात् उनकी रिसीवरशिप के दौरान प्राप्त धनराशि से संबंधित मामलों में उनका आचरण खेदजनक था तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के लिए अशोभनीय था। यह न केवल कलकत्ता उच्च न्यायालय के आदेशों के उनके द्वारा किए गए व्यतिक्रमण पर पर्दा डालने की चेष्टा थी बल्कि गलत बयान देकर इससे रिसीवर की निधि के बड़े पैमाने पर किए गए गबन पर पर्दा डालने की चेष्टा का खुलासा हुआ है जिसका ब्यौरा निम्नानुसार है:-

(क) 3 दिसम्बर, 2003 को न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति होने के पश्चात् रिसीवर के तौर पर कार्य से मुक्ति के लिए उनकी ओर से कोई आवेदन नहीं किया गया और न ही किसी भी समय उन्हें रिसीवर के कर्तव्यों से मुक्त किया गया है। 3 अगस्त, 2004[40] के आदेशानुसार (आवेदन सं. जीए 875/2003 में)[41] 1983 के वाद सं. 8 में वादी (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया) द्वारा दायर आवेदन कलकत्ता उच्च न्यायालय ने पूर्व रिसीवर द्वारा बेचे गए सामान से हुई आय से भिन्न एक अन्य अधिवक्ता (श्री सौमेन बोस) को न बेचे गए शेष माल (यथा 4.311 मी. टन) के छोटे हिस्से के विक्रय के लिए नियुक्त किया जो "पूर्ववर्ती रिसीवर" (यथा सौमित्र सेन[42]) द्वारा अब तक बेचा नहीं गया था।

(ख) न्यायाधीश के रूप में उनकी पदोन्नति (दिसम्बर, 2003 में) के पश्चात् न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने उन्हें रिसीवर नियुक्त करने वाले न्यायालय से उनकी रिसीवरशिप के तहत विक्रय से प्राप्त राशि के साथ अपने लेन-देन के अनुसमर्थन या अनुमोदन के लिए कार्योत्तर भी अनुमति नहीं मांगी और न ही ऐसा कोई आवेदन दायर किया जिसमें उसने न्यायालय को बताया कि उस निधि का आखिरकार क्या हुआ।

(ग) यह अभिलेख में स्वीकृत स्थिति है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय में कोई लेखे दायर नहीं किए गए जैसा सामित्र सेन को रिसीवर के रूप में नियुक्त करते हुए

30 अप्रैल, 1984[43] के आदेश द्वारा निदेश दिया गया था (कलकत्ता उच्च न्यायालय के मूल शाखा नियमों के अध्याय XXI द्वारा भी अपेक्षित)। वस्तुत: 1983 के वाद संख्या 8 से जुड़े कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेशों में से एक आदेश से यह प्रतीत होता है कि पीठासीन न्यायाधीश ने सौमित्र सेन द्वारा रिसीवर के लेखाओं के दायर किए जाने/दायर न किए जाने को लेकर कलकत्ता उच्च न्यायालय की रजिस्ट्री से विशिष्ट जांच-पड़ताल की थी और उस जांच-पड़ताल के फलस्वरूप 20.7.2005[44] का प्रतिवेदन तैयार किया गया जिसे कलकत्ता उच्च न्यायालय के लेखा विभाग द्वारा दायर किया था (21 जुलाई, 2005 के न्यायालय के आदेश में यथा-अभिलिखित) कि "यद्यपि संग्रहण किया गया है किंतु उक्त वाद में पूर्ववर्ती रिसीवर द्वारा कोई लेखे दायर नहीं किए गए हैं"।

(घ) जहां तक पूर्व रिसीवर श्री सौमित्र सेन को पहले ही चुकाए जा चुके बिक्री से प्राप्त हुए 33,22,800 रूपये का संबंध है, तो श्री सौमित्र सेन को कलकत्ता उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किए जाने के बाद जो घटनाएं घटीं, वे घटनाएं कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में पद और जिम्मेदारी प्राप्त उनके जैसे न्यायाधीश के लिए आत्मबोध के पूर्ण अभाव को दर्शाता है। सबसे पहले उनका आचरण इस तरह का था कि उन्होंने उस न्यायालय से कुछ भी कहने से परहेज किया जिसने उन्हें पहले रिसीवर के रूप में नियुक्त किया था और उनसे जानकारी प्राप्त करने के लिए न्यायालय द्वारा जो प्रयास किए गए उनसे उन्होंने बचना चाहा; और फिर जब ऐसा करना और अधिक समय तक संभव नहीं रह गया तो उन्होंने न्यायालय में सकारात्मक परन्तु गलत बयान दिया और वह भी शपथ-पत्र (उनकी ओर से उनकी मां का अटर्नी के रूप में) पर जिसे सही मानते हुए उसके आधार पर कलकत्ता उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने दिनांक 25.09.2007 को श्री सौमित्र सेन के पक्ष में निर्णय पारित कर दिया। ये सभी घृणित घटनाएं मौजूदा कार्यवाहियों के रिकार्ड में लाई गई हैं जो संक्षेप में निम्नानुसार उल्लिखित हैं:

(i) यह कि सौमित्र सेन के न्यायाधीश बनने से पहले वादी के अधिवक्ता (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया के अधिवक्ता द्वारा 1983 के वाद सं. 8 में) द्वारा एक पत्र दिनांक 7.3.2002[47] को भेजा गया था जिसके माध्यम से सौमित्र सेन को

रिसीवर के रूप में उनके द्वारा बेचे गए सामान से हुई आगम के संबंध में लेखाओं का विवरण देने को कहा गया था (3.5.2010 को दायर प्रतिरक्षा के अपने लिखित कथन में न्यायमूर्ति सेन कहते हैं कि उन्हें यह पत्र व्यक्तिगत रूप से प्राप्त नहीं हुआ है)। 7.3.2002 के इस पत्र का कोई उत्तर प्राप्त नहीं होने के आधार पर वादी (स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया वाद सं. 8, 1983) ने अन्य बातों के साथ-साथ लेखाओं की व्याख्या करने और बिक्री से हुई आगम न्यायालय में जमा करने के संबंध में पारित आदेश के बाबत न्यायालय में जी ए 875/03[48] दिनांक 27.02.2003 के माध्यम से एक आवेदन दायर किया।

(ii) 3 दिसंबर, 2003 को श्री सेन के न्यायाधीश बनने के बाद जी ए 875/2003 (1983 के वाद संख्या 8 में) के संबंध में दिनांक 7.3.2005[49] और 3.5.2005[50] के विशिष्ट आदेश तामील होने के पश्चात् न्यायालय द्वारा उनसे अनुरोध किया गया था कि "वह या तो स्वयं या किसी अधिकृत अभिकर्ता, जिसे वह उचित समळों, के माध्यम से शपथ-पत्र दायर करें और बताएं कि इस न्यायालय के आदेश के संबंध में उन्होंने क्या कदम उठाएं हैं और बिक्री से उन्हें कितनी राशि प्राप्त हुई है"; उनको शपथ-पत्र में यह भी बताना था कि "किस बैंक या किस बैंक की शाखा में बिक्री से हुई प्राप्ति को जमा किया गया है" और साथ ही "जमा की रसीदों की प्रति संलग्न करने अथवा सभी दस्तावेज और पासबुक, यदि कोई हो, को मुहरबंद लिफाफे में बंद कर कलकत्ता उच्च न्यायालय के मूल शाखा रजिष्ट्रार को भेजने " की आवश्यकता थी जो सुनवाई की अगली तिथि पर इस न्यायालय के समक्ष इन्हें अपनी बारी आने पर प्रस्तुत करता- लेकिन इस विशिष्ट और विस्तृत आदेश के बावजूद न्यायाधीश सौमित्र सेन ने इसकी अनदेखी की- उन्होंने आदेश का पालन नहीं किया। न्यायाधीश सेन ने जीए 875/2003 के संबंध में कोई शपथ-पत्र दायर नहीं किया, न ही उन्होंने कोई बयान दिया, न ही आवेदन सं. जी ए 875/2003 की सुनवाई के समय न्यायालय के समक्ष अधिवक्ता या किसी अन्य प्रतिनिधि के माध्यम से उपस्थित हुए: न ही उस समय उनका यह दावा (जैसा कि अभी है) था कि 3 दिसंबर, 2003 से पहले दिसंबर 2003 में न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति ही रिसीवर के रूप में उनके अच्छे आचरण की अभिपुष्टि है: क्योंकि रिसीवर

के रूप में उनके लेनदेन के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करने के बाद ही संबंधित प्राधिकारियों द्वारा उनकी नियुक्ति की गई होगी। मौजूदा कार्यवाहियों में अभी इस तरह का अविश्वसनीय तर्क प्रस्तुत करना अस्वीकृत करने लायक है।

(iii) इस बात से संतुष्ट होने के बाद कि 2003 के आवेदन सं. जीए 875/2003 की प्रति न्यायाधीश सौमित्र सेन को विधिवत तामील की गई थी, कलकत्ता उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश ने दिनांक 17/5/05 [51] के आदेश द्वारा बिक्री और वितरित किए गए सामानों के मूल्य के लिए किए गए भुगतान संबंधी विवरणों के संबंध में सामानों (जिनके सौमित्र सेन रिसीवर नियुक्त किए गए थे) के क्रेता के शपथ-पत्र को रिकार्ड किया (जीए 875/2003) और यह भी रिकार्ड किया कि 25, फरवरी, 1993 से लेकर 30 अप्रैल, 1995 तक रिसीवर को विभिन्न तिथियों को 33,22,800/- रूपये की रकम का भुगतान किया गया; उसी आदेश में यह भी कहा गया था कि क्रेता के शपथ-पत्र की एक प्रति पूर्व रिसीवर को उपलब्ध करवाई जानी चाहिए और "यदि रिसीवर स्वयं उचित समळो या याचिकाकर्त्ता और क्रेता (वादी, स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया) द्वारा किए गए कथनों और दिए गए विवरणों से सरोकार रखने वाले अधिकृत अभिकर्त्ता द्वारा परामर्श दिया जाए, तो शपथ-पत्र दायर करने के लिए रिसीवर स्वतंत्र होगा।" इसके उत्तर में कोई शपथ-पत्र दायर नहीं किया गया। चूंकि ऐसा दिखाया गया था कि 17 मई, 2005 का आदेश न्यायमूर्ति सौमित्र सेन पर तामील[53] किया गया था; जैसा कि एकल न्यायाधीश ने कहा: "तामील किये जाने के बावजूद कोई भी इस मामले के बारे मे कुछ कहने के लिए उपस्थित नहीं हुआ।" फिर एकल न्यायाधीश ने आगे अभिलिखित किया कि: "इस न्यायालय के पास इस बात की जांच करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है कि पूर्व रिसीवर द्वारा कथित रूप से प्राप्त किये गये भुगतान का क्या हुआ।"

(iv) इसके बाद 2003 के जीए 875 के संबंध में कार्यवाही 10.4.2006 (संबंधित आदेश रिकार्ड किए गए हैं) तक जारी रही। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने किसी भी आदेश का, चाहे वह दिनांक 7.3.2005[54] का हो, दिनांक 3.5.2005[55] का हो या दिनांक 17.5.2005[56] का हो (जीए 875/2003 में पारित,) शपथ-पत्र

दायर कर या न्यायालय में बयान देकर पालन नहीं किया, न ही वह सुनवाई की निम्नांकित तिथियों यथा; 30 जून, 2005[57], 21 जुलाई, 2005[58], 26 जुलाई, 2005[59] , 7 सितंबर, 2005[60] , 4 अक्तूबर, 2005[61] , 12 दिसंबर, 2005[62] ,9 जनवरी, 2006[63] , 1 फरवरी, 2006[64] , 15 फरवरी, 2006[65] और 1 मार्च, 2006[66] को अपने अधिवक्ता या किसी और के माध्यम से उपस्थित ही हुए --- अंतत: इन सभी बातों से आजिज आकर कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश (जो 2003 के जी ए 875, की सुनवाई कर रहे थे) ने न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को उस 52,46,454 रूपये का भुगतान करने का निर्देश (आदेश दिनांक 10.04.2006[67] द्वारा) दिया जो रिसीवर के रूप में उनके हाथों में होने चाहिए थे: (अर्थात् 33,22,800 रुपये में 1.4.2003 तक 5% का ब्याज जोड़कर और 2.4.2003 से 1.4.2006 तक मूल धनराशि पर 9 प्रतिशत का ब्याज -- जिसमें सौमित्र सेन द्वारा वादी के अधिवक्ताओं को पहले ही चुकाए गए 5 लाख रुपये की रकम को समायोजित किया गया है और रिसीवर के पारिश्रमिक को घटाया गया है)। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से बिना किसी विरोध के इस आदेश का पालन किया गया- इस पर उनके द्वारा न तो कोई प्रश्न किया गया और न ही किसी अपील या किसी अन्य कार्यवाही के जरिए इस आदेश को चुनौती दी गई। बिना किसी आपत्ति के न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने दिनांक 10.04.2006 के आदेश के अनुपालन में 27.06.2006 और 15.09.2006 को आंशिक भुगतान किया (इसका खुलासा नहीं किया गया है कि किस स्रोत से यह भुगतान किया गया) और इसके बाद आवेदन जीए 2968/06[68] प्रस्तुत कर शेष राशि जमा करने के लिए और अधिक समय मांगा।

(v) दिसंबर 2003 में सौमित्र सेन के न्यायाधीश बनने के बाद रिसीवर के रूप में उनकी ओर से आवेदन जीए 2968/2006, दिनांक 14.09.2006 पहला आवेदन था, यह आवेदन उनके नाम से प्रस्तुत नहीं किया गया बल्कि अटर्नी के रूप में नियुक्त उनकी मां के नाम से प्रस्तुत किया गया। मौजूदा प्रयोजन के लिए इसका महत्व इस तथ्य में निहित है कि इस आवेदन में इस बात का कोई उल्लेख नहीं किया गया कि रिसीवर (सौमित्र सेन) द्वारा प्राप्त धनराशि का

कैसे उपयोग या निवेश किया गया। इस आवेदन में 12 लाख रूपये से अधिक की शेष राशि का भुगतान करने के लिए केवल समय मांगा गया था- इस आवेदन में यह निवेदन किया गया था कि "यदि यह माननीय न्यायालय उक्त रिसीवर को इस माननीय न्यायालय की लंबी छुट्टी के बाद दो सप्ताह के भीतर शेष राशि जमा करने की अनुमति देता है, तो यह पूर्व रिसीवर के लिए सहायक होगा।" इस आवेदन में एकल न्यायाधीश के दिनांक 10.4.2006 के आदेश में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के आचरण के बारे में की गई प्रतिकूल टिप्पणियों के बारे में कोई शिकायत नहीं की गई थी। जीए2968/2006 की सुनवाई करने वाले एकल न्यायाधीश ने सौमित्र सेन द्वारा मांगा गया समय प्रदान कर दिया गया, इसके बाद न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा शेष राशि का भुगतान बिना किसी विरोध और "बिना किसी पूर्वग्रह" के 21.11.2006 को किया गया: इस संबंध में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया कि किस स्रोत से इतनी बड़ी राशि चुकाई गई। 10.04.2006 के आदेश को स्वीकृत कर उस पर कार्रवाई की गई।

(vi) उनके द्वारा दिनांक 10.04.2006[69] के आदेश जिसमें 52,46,454.00 रुपये की संपूर्ण न्यायनिर्णीत राशि का भुगतान करने के निदेश दिए गए थे, का पालन करने के पश्चात् और दिनांक 15 दिसंबर, 2006 को सेन द्वारा किए गए अनुरोध के अनुसार एकल न्यायाधीश द्वारा भुगतान के लिए समय सीमा में वृद्धि करने के आगे के आदेश का लाभ होने के पश्चात् यह पहली बार था कि न्यायाधीश सौमित्र सेन ने अपने नियत अटर्नी (अपनी मां) के माध्यम से कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 10.04.2006 के अपने पूर्व आदेश में की गई प्रतिकूल टिप्पणियों और प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली टिप्पणियों को निकालने के लिए 1983 के वाद संख्या 8 में एक अन्य अंतर्वर्ती आवेदन 2006[70] जीए 3763 दायर किया - जैसा कि ऊपर विदित है कि यह कार्य दिनांक 10.4.2006 के आदेश को स्वीकार करने तथा न्यायाधीश द्वारा दिए गए निदेश के अनुसार 52,46,454.00 रुपये की संपूर्ण राशि का भुगतान वापिस करके आदेश का पालन करने के पश्चात् हुआ था। इस आवेदन में भी न्यायाधीश सौमित्र सेन ने एकल न्यायाधीश के दिनांक

10.4.2006[71] के उस आदेश पर कोई प्रश्न नहीं किया। जिसमें उन्हें 52,46,454/- रुपये की राशि का भुगतान करने के निदेश दिए गए थे और न ही उन्होंने रिसीवर के रूप में उनके द्वारा प्राप्त की गई राशि को लौटाने के अपने व्यक्तिगत दायित्व से इनकार किया तथा न ही उन्होंने उनके द्वारा लौटाई जानेवाली राशि की प्रमात्रा (उच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित) के आकलन पर कोई प्रश्न ही किया। तथापि दिनांक 15.12.2006 के इस आवेदन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसके साथ न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की मां का दिनांक 13.12.2006[73] का शपथ-पत्र लगा था जिसके पैराग्राफ 6 में यह पहली बार कहा (न्यायाधीश सेन की ओर से) गया था कि बिक्री से उनके द्वारा प्राप्त आय (33,22,800 रुपये) को "बैंक के खातों में जमा किया गया था परंतु बाद में अधिक ब्याज कमाने के उद्देश्यार्थ एक पब्लिक लिमिटेड कंपनी अर्थात् लिंक्स इंडिया लिमिटेड (समापनाधीन) में निवेश कर दिया गया था।" (पूर्वोक्त) कलकत्ता उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 10.4.2006[75] को पारित अपने पूर्व के आदेश अर्थात् पहले के रिसीवर द्वारा किए गए 52,46,454/- रुपये के भुगतान, के विधिवत् अनुपालन को दर्ज करने के बाद जीए 3763/2006 का अंतिम रूप से दिनांक 31.07.2007[74] को निपटान कर दिया। तथापि, एकल न्यायाधीश ने दिनांक 10.04.2006 को पारित अपने पूर्व के आदेश की गई टिप्पणियों/समुक्तियों को निकालने से इनकार कर दिया। दिनांक 31.07.2007 का यही वह आदेश है (दिनांक 10.4.2006 के आदेश में की गई प्रतिकूल टिप्पणियों को निकालने से इनकार करना) जिसे न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा नियुक्त अटर्नी के रूप में उनकी मां के माध्यम से अपील ळापन एपीओटी 462/07 (बाद में एपीओ 415/07 के रूप में अंकित)[76] फाइल करके पुन: चुनौती दी गई। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से (नियुक्त अटर्नी के रूप में उनकी मां के माध्यम से) एक न्यायाधीश के निर्णय (दिनांक 31.07.2007) के विरूद्ध दिनांक 29.8.2007 को दायर अपील के ळापन के आधार संख्या XIII में यह कहा गया था:

> "XIII ऐसा इसलिए है कि विद्वान न्यायाधीश यह समळाने में असफल रहे कि पूर्व रिसीवर द्वारा कंपनी में किए गए सभी निवेश पूर्व रिसीवर

द्वारा व्यक्तिगत रूप से अपने नाम पर चल रहे ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक के खाता संख्या 01SLP0156800 पर आहरित चेकों द्वारा किए गए थे। **इसका प्रमाण शासकीय समापक द्वारा खुलासा किए गए दस्तावेजों के साथ-साथ स्टैंडर्ड चार्टर्ड बैंक द्वारा प्रदर्शित किए गए दस्तावेजों से भी मिलता है। याचिकाकर्ता की ओर से प्रस्तुत टिप्पणों में भी इसके बारे में कहा गया।**" (इस बात पर विशेष बल दिया गया है)*

(vii) कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने दिनांक 25.09.2007[77] के अपने निर्णय में अपील को मंजूर किया और दिनांक 10.4.2006 के आदेश में की गई टिप्पणियों और समुक्तियों, जिन्हें निकालने की मांग की गई थी, को निकालने के निदेश देने के साथ ही यह स्वीकार किया कि एकल न्यायाधीश को इस प्रकार की टिप्पणी करने का कोई अधिकार नहीं था। खंडपीठ 78 ने न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से (दिनांक 13.12.2006 के शपथ पत्र में) दिए गए स्पष्टीकरण का संदर्भ लेते हुए, और जाहिर तौर पर अपील-ज्ञापन के आधार सं. XIII में दिए गए और कथनों को ध्यान में रखते हुए यह कहा:

(i) "इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है कि उक्त पूर्व रिसीवर ने स्वयं को लाभ पहुंचाने हेतु कुछ भी नहीं किया। इसके विपरीत, अभिलेखों से यह पता चलता है कि धन को पूर्व रिसीवर द्वारा वित्त कंपनी में जमा किया गया था, परंतु चूंकि यह कंपनी बंद हो गई थी इसलिए धन की वसूली नहीं हो पाई थी....." और यह कि "उक्त पूर्व रिसीवर द्वारा किसी प्रकार का दुर्विनियोजन नहीं किया गया था।"

इसके पश्चात् खंड पीठ इस निष्कर्ष पर पहुंची:

"विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा निकाला गया निष्कर्ष बिना किसी ठोस तथ्यों के आधार पर निकाला गया निष्कर्ष है। यह समळा नहीं आता कि दाण्डिक

---

* जब ए.एन.जेड. गिंडलेज बैंक चर्च लेन शाखा के खाता संख्या 01SLP0156800 के खाता खोलने के फार्म को गवाह सी डब्ल्यू-5, प्रबंधक (आंतरिक सेवाएं स्टैडर्ड चार्टर्ड बैंक, पूर्व ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक) के माध्यम से मुख्य परीक्षा के लिए प्रस्तुत किया गया, तो न्यायमूर्ति सौमित्र सेन (प्रत्यर्थी) के काउंसेल ने प्रतिपरीक्षा में (सी डब्ल्यू-5) यह फार्म उनके सामने रखकर उनसे यह पूछा कि इसके द्वारा खोला गया खाता संख्या 01SLP0156800 प्रत्यर्थी (न्यायमूर्ति सौमित्र सेन) का नहीं है, तो उनके उत्तर में यह कहा गया कि "संभवत: नहीं"। सी डब्ल्यू-5 ने प्रतिपरीक्षा में आगे यह भी कहा कि "उल्लिखित हस्ताक्षर और पता प्रत्यर्थी (न्यायमूर्ति सौमित्र सेन) से मेल नहीं खा रहा है।" इस प्रकार स्वीकार्य तौर पर आधार संख्या XIII में उल्लिखित खाता संख्या सौमित्र सेन का खाता नहीं था जिन्हें माल का रिसीवर नियुक्त किया गया था परंतु यह "सौमित्र सेन" के समान नाम के व्यक्ति का खाता था जो फूड स्पेशिलटिज लिमिटेड (देखें एक्जिविट सी-304, सी-303 और सी-301) के सेल प्रोमोटर का खाता था। प्रत्यर्थी "सौमित्र सेन" के नाम से ए.एन.जेड. ग्रिंडलेज बैंक चर्च लेन शाखा में खोला गया खाता संख्या 01SLP0632800 था; जो "सौमित्र सेन" नाम से एकदम अलग व्यक्ति के खाता संख्या 01SLP0156800 से पूरी तरह भिन्न है। खाता संख्या 01SLP00156800 को "पूर्व रिसीवर के व्यक्तिगत नाम से खाता" मानते हुए, जो नहीं था, आधार सं. XIII में दिया गया कथन जाहिर तौर पर मिथ्या और भ्रामक है। यदि खाते की संख्या 01SLP0632800 भी दी जाती, तो भी आधार XIII में दिए गए कथन मिथ्या और भ्रामक होते।

या अन्यथा विश्वास भंग, का निष्कर्ष कैसे निकाला गया और न ही यह समळाा में आता है कि यह टिप्पणी कैसे की जा सकती है कि कोई दुर्विनियोजन हुआ था। एकल न्यायाधीश का आदेश बिना किसी अधिकारिता के है और इसका दर्ज किए गए तथ्यों द्वारा समर्थन नहीं होता है।"

V. निर्णय के पश्चात् का घटनाक्रम द्वारा (2007 का एपीओटी 462 और 2007 का एपीओ 415 भी) में कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ के दिनांक 25.9.2007 का आदेश।

न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंड पीठ द्वारा वियुक्त किए जाने के बावजूद उनका आचरण रिसीवर के रूप में प्रभार में ली गई निधियों के "दुर्विनियोजन" के समान है। राज्य सभा के 58 सदस्यों (जैसे पहले उल्लेख किया गया है) ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में न्यायमूर्ति सौमित्र सेन को हटाने की प्रक्रिया आरंभ करने के लिए प्रस्ताव की सूचना दी थी। माननीय सभापति द्वारा दिनांक 27.2.2009 को इस प्रस्ताव को स्वीकार करने के पश्चात् इस (पुनर्गठित समिति) जांच समिति को यह जिम्मेवारी सौंपी गई कि वह इस प्रस्ताव में उल्लिखित न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के अवचार के कारण उत्पन्न निश्चित आरोपों की जांच करके उससे संबंधित प्रतिवेदन तैयार करे। इस दौरान न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के अन्वेषण काउंसल ने कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंडपीठ के दिनांक 25.9.2007[79] के निर्णय पर पूरी तरह निर्भर करते हुए यह प्रतिविरोध किया कि 1968 के इस अधिनियम के अंतर्गत संपूर्ण कार्यवाही अधिकारिता के बगैर है, और न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध तब तक कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती है जब तक कि इस खंड पीठ के निर्णय को या तो वापिस नहीं लिया जाता या इसे 'अपास्त' नहीं नहीं कर दिया जाता है; उन्होंने यह भी कहा कि इस निर्णय के निष्कर्ष जांच समिति पर बाध्यकारी हैं। उठाए गए कुछ अन्य प्रतिविरोधों के साथ-साथ अब इस विषय पर विचार किया जाये।

VI. शेष प्रतिविरोध और न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से किए गए निवेदन।

न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रतिविरोध किया गया कि:-

(1) उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर उसी न्यायालय के अलावा किसी अन्य के प्रति उत्तरदायी नहीं है, जो उसे नियुक्त करता है। अत:, जाँच समिति उस रिसीवर के आचरण की जाँच नहीं कर सकती है।

(2) उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर के विरूद्ध न तो कोई कार्रवाई संस्थित की जा सकती है और न ही तब तक कोई कार्रवाई की जा सकती है जब तक रिसीवर नियुक्ति करने वाला न्यायालय इसकी अनुमति प्रदान नहीं कर देता है।

(3) यह कि कलकत्ता उच्च न्यायालय केवल उच्चतम न्यायालय के अपीलीय क्षेत्राधिकार के अध्यधीन है, अपना स्वयं का अभिलेख तैयार करने, उसके रख-रखाव और उसे संरक्षित करने के लिए एकमात्र और अनन्य प्राधिकरण है और उच्च न्यायालय के अभिलेखों (जिसमें इसके निर्णय भी शामिल होंगे) की जांच करने की अनुमति स्वयं उच्च न्यायालय (या भारत के उच्चतम न्यायालय) के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति या प्राधिकरण को नहीं दी जा सकती है।

(4) रिसीवर द्वारा खातों की जानकारी न देना जाँच का मामला था और रिसीवर को नियुक्त करने वाले न्यायलय द्वारा न्यायनिर्णित किया जाना था और न्यायाधीश सौमित्र सेन द्वारा किसी प्रकार के खातों को प्रस्तुत न किए जाने के आधार पर ऐसा कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता था जो उनके प्रतिकूल हों, जैसा कि उन्हें रिसीवर नियुक्त करने के दिनांक 30 अप्रैल, 1984 के आदेश में निदेशित था।

(5) सौमित्र सेन को कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के पद पर नियुक्त करते समय रिसीवर के रूप में उनकी नियुक्ति के बारे में कोलकाता उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को जानकारी थी। अत:, यह मानना उचित प्रतीत होता है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भी इस तथ्य से परिचित थे और सरकार तथा राष्ट्रपति को भी इस तथ्य की जानकारी थी: इस प्रकार भारत के राष्ट्रपति के द्वारा न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति को तब तक निरस्त नहीं जा सकता है, जब तक कि उनके विरूद्ध आरोपों को युक्तियुक्त संदेह से परे सिद्ध नहीं कर दिया जाता है।

समिति के विचार में इनमें से किसी भी तर्क पर निम्न कारणों से गंभीरतापूर्वक विचार करने की आवश्यकता नहीं है:

(क) प्रथम तीन तर्कों के संबंध में - संदर्भ: ऊपर उल्लिखित (1), (2) और (3) :-

(1) जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है, जाँच समिति की कार्यवाही न्यायाधीश जाँच अधिनियम, 1968 के उपबंधों के अन्तर्गत की गई है और, उसी के अनुसरण अधिसूचना जारी की गई है। माननीय सभापति द्वारा गृहीत राज्य सभा के 58 सदस्यों के प्रस्ताव में यह कहा गया है।

"संविधान के अनुच्छेद 124(4) के साथ पठित अनुच्छेद 217 के अधीन प्राप्त प्रस्ताव"

सभापति ने न्यायाधीश (जाँच) अधिनियम, 1968 की धारा 3 के अन्तर्गत श्री सीताराम येचुरी और अन्य सदस्यों (कुल सत्तावन) से प्राप्त निम्नलिखित प्रस्ताव को गृहीत किया है जिसकी सूचना भारत के संविधान के अनुच्छेद 124(4) के साथ पठित अनुच्छेद 217 के अधीन दी गई थी :-

"यह सभा संकल्प करती है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति, सौमित्र सेन को पद से हटाए जाने के लिए राष्ट्रपति को अवचार के निम्नलिखित दो आधारों पर एक पत्र लिखा जाना चाहिए:-

(i) कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा रिसीवर के रूप में उनकी नियुक्ति की हैसीयत से प्राप्त किए गए धन का बड़ी मात्रा में दुर्विनियोजन; और

(ii) कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष धन के दुर्विनियोजन के संबंध में तथ्यों का दुर्व्यपदेशन।"

प्रस्ताव को न्यायाधीश (जाँच) अधिनियम, 1968 और उसके अधीन नियमों में निर्धारित आगे की कार्रवाई किए जाने तक लंबित रखा जाएगा।

(ii) राज्य सभा के समक्ष कार्यवाही, (यहां तक मानते हुए कि उन्हें कहीं ओर भी चुनौती दी जा सकती है) न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा या उनकी ओर से किसी उपयुक्त न्यायालय या किसी अन्य प्राधिकारी के समक्ष चुनौती नहीं दी गई है। दिनांक 16-12-2009 की अधिसूचना द्वारा नियुक्त की गई इस जाँच समिति को इस आधार पर अपनी कार्यवाही शुरू करनी होगी कि यह प्रस्ताव (जिसे लम्बित रखा गया है) वैध है। उपरोक्त प्रतिविरोध (1), (2) और (3) राज्य सभा में गृहीत किए गए प्रस्ताव के दायरे में हैं, तथा कोई भी ऐसा प्रतिविरोध, जिसमें राज्य सभा के सभापति द्वारा प्रस्ताव को गृहीत किए जाने पर ही प्रश्नचिह्न लगाया गया हो, उस पर यह जाँच समिति विचार नहीं कर सकती है। संसद जब भी किसी विधान अथवा संकल्प अथवा प्रस्ताव द्वारा अपने विचार व्यक्त करती है तो उस पर प्रश्नचिह्न लगाने का अधिकार किसी को भी नहीं है और निश्चित तौर पर उस समिति को तो यह

अधिकार बिल्कुल भी नहीं है जिसका गठन ही उस प्रस्ताव के अनुसरण में किया गया हो।

(iii) जब कोई पक्षकार रिसीवर की हैसियत से रिसीवर के विरूद्ध कोई वाद दायर करता है तो वह उस न्यायालय की अनुमति के बिना ऐसा नहीं कर सकता है जिसने उस रिसीवर को नियुक्त किया हो; परंतु विधिपूर्वक यह प्रतिविरोध नहीं किया जा सकता कि संसद में अथवा इसकी किसी भी सभा में किसी संकल्प अथवा प्रस्ताव के लिए न्यायालय की अनुमति की आवश्यकता है: उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने के लिए कार्यवाही संस्थित करना अथवा न करना संसद का अनन्य और विशिष्ट अधिकार होने के साथ ही विशेषाधिकार भी है तथा किसी न्यायाधीश के विरूद्ध कर्त्तव्यों के संबंध में अथवा रिसीवर अथवा अन्यथा के संबंध में अभिकथित "अवचार" से संबंधित किसी प्रस्ताव को गृहीत करना संसद की किसी भी सभा के पीठासीन अधिकारी का अनन्य और विशिष्ट अधिकार होने के साथ ही विशेषाधिकार भी है।

(iv) कलकत्ता उच्च न्यायालय एक "अभिलेख न्यायालय" है और इस तथ्य को चुनौती नहीं दी जा सकती है किन्तु जैसा कि तर्क दिया गया है, जाँच-समिति के समक्ष अन्वेषण का विषय "उच्च न्यायालय के अभिलेखों" की जांच करना नहीं है। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्ड पीठ के दिनांक 25 सितम्बर, 2009[80] के जिस निर्णय पर निर्भर किया है, वह सर्वबंधी निर्णय नहीं है अपितु पक्षकारों के बीच हुआ निर्णय है: यह निर्णय न्यायाधीश को एकल न्यायाधीश के दिनांक 10 अप्रैल, 2006[81] के निर्णय में की गई प्रतिकूल टिप्पणियों और आलोचनाओं से वियुक्त कर देता है; कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के निर्णय का निष्कर्ष यह है कि न्यायमूर्ति सेन द्वारा कोई "दुर्विनियोजन" नहीं किया गया है, यह एक ऐसा निष्कर्ष है जो 1983 के वाद संख्या 8 के पक्षकारों के अलावा अन्य किसी पर बाध्यकारी नहीं है। यह निष्कर्ष न्यायाधीश को संविधान के अनुच्छेद 124 (4) के साथ पठित अनुच्छेद 217(1) के उपबंध (ख) के अन्तर्गत संसद में कार्यवाही से न तो वियुक्त कर सकता है और न ही करता है। इस संबंध में कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के दिनांक 25 सितम्बर, 2007 के निर्णय में की गई यह समुक्ति, उनकी मां द्वारा उनकी ओर से दायर किए गए निर्विरोध शपथ-

पत्र (ऊपर प्रस्तुत किया गया है), पर विचार करने के बाद की गई है कि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा प्राप्त की गई धनराशि का कोई दुर्विनियोजन नहीं हुआ है, जिसमें स्पष्ट रूप से यह माना गया है कि वस्तुओं की बिक्री से उन्हें प्राप्त हुई सम्पूर्ण धनराशि (33,22,800 रुपये) को लिंक्स इण्डिया लिमिटेड में निवेश कर दिया गया था और बाद में कुछ ही वर्षों में उस कम्पनी का समापन हो गया: यह कथन और उपर्युक्त अपील-ज्ञापन के आधार सं. XIII में भ्रामक एवं मिथ्या कथन: कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष न्यायमूर्ति सौमित्र सेन द्वारा और उनकी ओर से तथ्यों का दुर्व्यपदेशन था। खण्डपीठ दिनांक 25 जुलाई, 2007 के अपने निर्णय में इस निष्कर्ष पर पहुंची थी कि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन किसी भी प्रकार के दुर्विनियोजन के दोषी नहीं हैं, वह न्यायमूर्ति सौमित्र सेन की ओर से किए पूर्णतया भ्रामक/मिथ्या व्यपदेश्न पर आधारित था।

(v) खण्डपीठ के निर्णय के रूप में कलकत्ता उच्च न्यायालय के अभिलेख यथावत् हैं, वे किसी भी तरह न तो राज्य सभा में प्रस्ताव लाए जाने से और न ही इस जांच समिति के प्रतिवेदन से प्रभावित होते हैं। न्यायमूर्ति सौमित्र सेन के विरूद्ध अभियोग का आधार एक ऐसा आचरण है जो "कदाचार" की श्रेणी में आता है और कलकत्ता उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष यह विचारणीय मुद्दा नहीं था।

(ख) संदर्भ: (4) - उपरोक्त प्रतिविरोध (4) में किया गया निवेदन अमान्य है। यह कि रिसीवर के रूप में न तो अधिवक्ता रहते हुए और न ही न्यायाधीश बनने के बाद सौमित्र सेन ने कोई लेखा प्रस्तुत किया और इस प्रकार से उन्होंने रिसीवर के रूप में उन्हें नियुक्त करने वाले आदेश का उल्लंघन किया जो "अवचार" का एक स्पष्ट उदाहरण है और "कदाचार" के समतुल्य है। विशेष रूप से चूंकि न्यायमूर्ति सौमित्र सेन ने उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में अपने पद का उपयोग करके अपनी मां का शपथ-पत्र (स्वयं के द्वारा नियुक्त अटर्नी के रूप में) दायर करते हुए (मिथ्या) कथन किया है कि उन्होंने 33,22,800 रुपये की सम्पूर्ण धनराशि का निवेश लिंक्स इण्डिया लिमिटेड में कर दिया था जो एक ऐसा कथन है जो मिथ्या साबित हो चुका है। यह शपथ-पत्र एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 10 अप्रैल, 2006 को दिए गए पूर्व-निर्णय में की गई प्रतिकूल टिप्पणियों को हटाने के लिए की जाने वाली कार्यवाही में दिया गया था; न्यायमूर्ति सेन ने उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के समक्ष

भी अन्य बातों के साथ-साथ इसी शपथ-पत्र पर निर्भर किया। इसी शपथ-पत्र पर निर्भर करते हुए जिसकी अपील ब्यापन (पूर्वोक्त) के आधार सं. XIII में पुन: घोषणा की गई है - कि 33,22,800 रुपये की सम्पूर्ण धनराशि को लिंक्स इण्डिया लिमिटेड में निवेश किया गया जिसका बाद में समापन हो गया - यह खण्डपीठ (न्यायमूर्ति सेन द्वारा मिथ्या व्यपदेशन के आधार पर -जो जाहिर तौर पर उस समय खण्डपीठ को पता नहीं थे) इस निष्कर्ष पर पहुंची कि सौमित्र सेन द्वारा वास्तव में रिसीवर के कोष का किसी भी तरह से दुर्विनियोजन नहीं किया गया।

(ग) संदर्भ: **(5)** उपरोक्त प्रतिविरोध संख्या 5 अमान्य है। अनुच्छेद 217(1) के उपबंध (ख) के साथ पठित अनुच्छेद 124(4) के अन्तर्गत न्यायाधीश को हटाने के लिए किसी संकल्प का न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति से कोई संबंध नहीं है; ऐसा इसलिए है कि न्यायाधीश के रूप में उनकी नियुक्ति पहले ही हो चुकी है, और ये अनुच्छेद तभी लागू होंगे यदि उनकी पदच्युति लिए आधार (अर्थात् "सिद्ध कदाचार") हो।

VII. <u>आभार-प्रदर्शन</u>

अभियोगों के निष्कर्षों को अभिलिखित करने से पूर्व न केवल औपचारिकता के रूप में अपितु ईमानदारी और सदाश्यता के साथ इस मामले के दोनों पक्षकारों की ओर से पेश हुए अधिवक्ताओं की भूमिका सराहनीय रही है। उनकी भूमिका और आचरण अनुकरणीय रहा। यह जांच समिति वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री सिद्धार्थ लूथरा और उनको सहयोग देने वाले अधिवक्ताओं की ऋणी है, यह जांच समिति वरिष्ठ अधिवक्ता, श्री शेखर नफाड़े और उनको सहयोग देने वाले अधिवक्ताओं की ऋणी है जिन्होंने इस मामले में काफी परिश्रम किया है। इनमें से प्रत्येक ने सम्पूर्ण कार्यवाही: साक्ष्य और बहस के दौरान इस समिति के साथ पूर्ण सहयोग किया। जांच समिति के लिए नियुक्त किये गए सचिव, श्री ए. सिन्हा ने कोलकाता से गवाहों की समय पर उपस्थिति एवं अभिलेखों की प्रस्तुति, प्रदर्शों (एग्जिबिट्स) के बंडल तैयार करने और अपने कार्यालय के अन्य कई कार्यों को अत्यन्त दक्षता पूर्वक करते हुए उत्कृष्ट सेवाएं प्रदान कीं। यह जांच समिति उन सभी कर्मचारियों के प्रति भी कृतज्ञतापूर्ण धन्यवाद ब्यापन करना चाहती है जिन्होंने इस कार्यवाही के दौरान अथक परिश्रम

किया जिनके नाम श्री प्रमोद के. गोयल, कार्यकारी अधिकारी; श्री जयन्त कुमार रूजे, सहायक; के साथ-साथ श्री मनोरंजन गौडा, निजी सहायक; कुमारी जुगनु खान, मोहम्मद अजमल खान, श्री सज्जन लाल, श्री प्रभाती लाल और श्री सुरेन्द्र कुमार हैं।

VIII. **जांच समिति के निष्कर्ष**

अभियोग-I	**निष्कर्ष**
<u>दुर्विनियोजन</u> (अर्थात् काफी बड़ी धनराशि का दुर्विनियोजन, जो उन्होंने कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर के रूप में प्राप्त की थी)	**सम्यक रूप से साबित हुआ - जैसाकि इस प्रतिवेदन के भाग IV में दिया गया है।**
अभियोग- II	**निष्कर्ष**
मिथ्या कथन - कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष धन के दुर्विनियोजन के संबंध में तथ्यों का मिथ्या व्यपदेशन	**सम्यक रूप से साबित हुआ - जैसाकि इस प्रतिवेदन के भाग IV में दिया गया है।**

उपरोक्त अभियोग I और अभियोग II के निष्कर्षों को देखते हुए, जांच समिति की यह राय है कि कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति सौमित्र सेन भारत के संविधान के अनुच्छेद 124(4) के साथ पठित अनुच्छेद 217(1) के उपबंध (ख) के अन्तर्गत "कदाचार" के दोषी हैं।

पीठासीन अधिकारी
(न्यायमूर्ति बी. सुदर्शन रेड्डी),
न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय

सदस्य
(न्यायमूर्ति मुकुल मुद्गल)
मुख्य न्यायमूर्ति, पंजाब और हरियाणा
उच्च न्यायालये

सदस्य
(फॉली एस. नारीमन)
वरिष्ठ अधिवक्ता,
भारत का उच्चतम न्यायालय।

टिप्पण-इस प्रतिवेदन के पाठ से संबंधित प्रदर्श

1. कॉर्पस ज्यूरिस सेकेण्डम (वाल्यूम 48ए) पृष्ठ 614

> "सामान्य नियम के रूप में न्यायाधीशों के संबंध में अनुशासनात्मक अथवा पदच्युति की कार्यवाही विशिष्ट प्रकार की होती है और यह दीवानी अथवा दाण्डिक प्रकृति की नहीं होती है; तथा इनका प्रयोजन न्यायिक आचरण की जांच करना होता है और इस प्रकार न्यायिक उपयुक्तता के मानदण्डों को बनाए रखा होता है।"

2. दिल्ली ज्यूडिशियल सर्विस एसोसिएशन बनाम स्टेट ऑफ गुजरात - ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 2176 पैरा 12 और 13; देवी प्रसाद बनाम मालूराम सिंघानी और अन्य 1969 (3) एस.सी.सी. 595(3जे.) पैरा 8 पेज 602; राजिक राम बनाम चौ. जसवंत सिंह चौहान 1975(4) एस.सी.सी. 769 पैरा - 15, पृष्ठ 776।

3. ब्लैक् की लॉ डिक्शनरी, छठा संस्करण (1990) पृष्ठ 1245।

4. भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 220(2) (ख) जिसे भारत (अनंतिम संविधान) आदेश, 1947 और भारत (अनंतिम संविधान) संशोधन आदेश, 1948 के रूप में अंगीकार किया गया, के संदर्भ में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश, न्यायमूर्ति श्री एस.पी. सिन्हा के संबंध में भारत के संघीय न्यायालय की रिपोर्ट (पुरालेखों में) से इस रिपोर्ट से न्यायाधीश जांच अधिनियम, 1968 के अंतर्गत जांच समिति के प्रतिवेदन में एक उद्धरण जोड़ा गया है। भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति वी. रामास्वामी के विरूद्ध अभिकथित कदाचार के अन्वेषण और सबूत के संबंध में खण्ड-2 (1992) के पृष्ठ 85 से 91 तक अनुलग्नक-एफ देखें

5. एग्जिबिट सी-10

6. एग्जिबिट सी-32

7. एग्जिबिट सी-37

8. एग्जिबिट सी-10

9. एग्जिबिट सी-67+सी-69

10. एग्जिबिट सी-63, एग्जिबिट सी-143, एग्जिबिट सी-144, एग्जिबिट सी-153, एग्जिबिट सी-154 और एग्जिबिट सी-59

11. एग्जिबिट सी-85 से सी-102, एग्जिबिट सी-58 और सी-103

12. एग्जिबिट सी-83 और सी-84, एग्जिबिट सी-154, एग्जिबिट सी-58, सी-145, एग्जिबिट सी-31 और सी-54

13. एग्जिबिट सी-70 और एग्जिबिट सी-68, सी-109, एग्जिबिट सी-130, सी-132, सी-134 और सी-136

14. एग्जिबिट सी-68 और सी-70

15. एग्जिबिट सी-70 इंट्री नं. 6, चेक संख्या 624079, लिंक्स इण्डिया लि. के पांच आवेदन पत्र एग्जिबिट सी-109, सी-130, सी-132, एग्जिबिट सी-134, एग्जिबिट सी-136 आवधिक जमा, एग्जिबिट सी-111, एग्जिबिट सी-112, सी-115, सी-116 रसीदें एग्जिबिट सी-110, एग्जिबिट सी-129, एग्जिबिट सी-131, एग्जिबिट सी-133, एग्जिबिट सी-135

16. एग्जिबिट सी-39 और सी-40

17. एग्जिबिट सी-110, सी-111, सी-112, सी-115 और सी-116

18. एग्जिबिट सी-63, सी-143, सी-144 से सी-147, सी-153 और सी-154

19. एग्जिबिट सी-69

20. साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 जो इस प्रकार है:

    106: विशेषत: ज्ञात तथ्य को साबित करने का भार

    "जबकि कोई तथ्य विशेषत: किसी व्यक्ति के ज्ञान में है, तब उस तथ्य को साबित करने का भार उस पर है।"

21. एग्जिबिट सी-39 और सी-40

22. पैरा-5 पृष्ठ-2 प्रतिवादी का लिखित कथन

23. एग्जिबिट सी-295

24. एग्जिबिट सी-294

25. एग्जिबिट सी-293

26. एग्जिबिट सी-265

27. एग्जिबिट सी-265, सी-266 और सी-267

28. एग्जिबिट सी-293 और सी-265

29. एग्जिबिट सी-265, सी-266 और सी-267

30. एग्जिबिट सी-293

31. एग्जिबिट सी-39 और सी-40

32. एग्जिबिट सी-213 से सी-262

33. एग्जिबिट सी-219 से सी-227; एग्जिबिट सी-230 से 233; एग्जिबिट 258 से 262

34. एग्जिबिट सी-39

35. एग्जिबिट सी-219 से सी-227, सी-230 से सी-233, सी-258 से सी-262

36. एग्जिबिट सी-148 से सी-152

37. एग्जिबिट सी-275 से सी-279, सी-297 और सी-299, सी-280 से सी-282, एग्जिबिट सी-285, सी-286, सी-288, एग्जिबिट सी-283, सी-284, सी-273

38. एग्जिबिट सी-63, सी-143, सी-153, सी-154

39. एग्जिबिट सी-69

40. एग्जिबिट सी-33

41. एग्जिबिट सी-43

42. एग्जिबिट सी-10 और सी-39 और सी-40

43. एग्जिबिट सी-10 और सी-34

44. एग्जिबिट सी-79

45. एग्जिबिट सी-15

46. एग्जिबिट सी-53

47. एग्जिबिट सी-43 का अंश

48. एग्जिबिट सी-43

49. एग्जिबिट सी-11

50. एग्जिबिट सी-12

51. एग्जिबिट सी-13

52. एग्जिबिट सी-54

53. शपथ-पत्र एग्जिबिट सी-56, सी-57, सी-13

54. एग्जिबिट सी-11

55. एग्जिबिट सी-12

56. एग्जिबिट सी-13

57. एग्जिबिट सी-14

58. एग्जिबिट सी-15

59. एग्जिबिट सी-16

60. एग्जिबिट सी-17

61. एग्जिबिट सी-18

62. एग्जिबिट सी-21

63. एग्जिबिट सी-22

64. एग्जिबिट सी-23

65. एग्जिबिट सी-24

66. एग्जिबिट सी-25

67. एग्जिबिट सी-41

68. एग्जिबिट सी-44, सी-45 और सी-46

69. एग्जिबिट सी-41

70. एग्जिबिट सी-48

71. एग्जिबिट सी-41

72. एग्जिबिट सी-48 और सी-49

73. एग्जिबिट सी-48

74. एग्जिबिट सी-42

75. एग्जिबिट सी-41

76. एग्जिबिट सी-51 और सी-52

77. एग्जिबिट सी-53

78. एग्जिबिट सी-53

79. एग्जिबिट सी-53

80. एग्जिबिट सी-53

81. एग्जिबिट सी-41